* ओ३म् *

वैदिक रहस्य — चतुर्थ भाग

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति ।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते ॥ मनुः

वैज्ञानिक-सिद्धान्त

सम्पादक —
शिवशंकर शर्म्मा,
काव्यतीर्थ

आगरा रामभूषण प्रेस में मुद्रित ।

प्रथमवार १००० | संवत् १९६९ वि० सन् १९१२ ई० | मूल्य ।-) डा० म०)॥

Printed under the authority of Rishishwar Nath Bhatt,
at the Ram Bhooshan Press, Agra.

ओ३म्

❋ वक्तव्य ❋

बहुत विलम्ब के पश्चात् "वैदिक रहस्य" का चतुर्थ भाग ईश्वर की कृपा से आज प्रकाशित होता है। मैं अपने ग्राहकों से क्षमाप्रार्थी हूं। आप जानते हैं कि श्रेयस्कर कार्य में बहु विघ्न हुआ करते हैं। यह चतुर्थ भाग बहुत बड़ा होगा। वेदों के रूपक विन्यास को पढ़ते २ पाठकगण उदासीन और अधीर होगए थे। अतः वैसे वर्णन को कुछ समय के लिये छोड़ वेदों और शास्त्रों के अन्यान्य परमोपयोगी विषय से पाठक लाभ उठावें इस इच्छा से "वैदिक विज्ञान" के पश्चात् "वैज्ञानिक सिद्धान्त" प्रकाशित करता हूं। इस भाग में बड़े २ रोचक और गंभीर सिद्धान्त रहेंगे। जिसके अभाव से आज भारतवासी मानसिक विचार में परम दुर्बल होगये हैं उनका ही विशेष वर्णन इस भाग में रहेगा। इस भाग को बड़े ध्यान से पाठक महोदय यदि पढ़ेंगे तो बहुत कुछ लाभ उठावेंगे किं बहुना।

मिथिलादेश निवासी

ता० १२-८-१९१२] शिवशङ्कर शास्त्री,

काव्यतीर्थ

वैज्ञानिक सिद्धान्त

जिज्ञासाऽध्याय
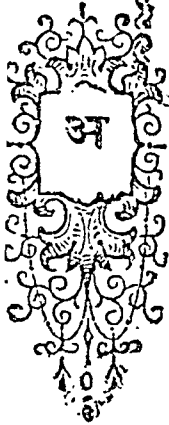
अविद्यायां बहुधा वर्तमाना वयं कृतार्था
इत्यभिमन्यन्ति बालाः। मुण्डकोपनिषद्॥

ज्ञातुमिच्छा जिज्ञासा। जानने की प्रबल इच्छा का नाम जिज्ञासा है। विज्ञान, अन्वेषण, खोज, तहक़ीक़ात (Research) इत्यादि अर्थों में यहां जिज्ञासा शब्द प्रयुक्त हुआ है। प्रत्येक नरनारी के हृदय में जिज्ञासा का बीज स्वभावतः विद्यमान है। इसी हेतु पश्वादिकों की अपेक्षा मानव जाति की उत्तरोत्तर वृद्धि, सृष्टि की आदि से होती चली आती है। जब बालक उत्पन्न होता है, यद्यपि उसकी इन्द्रिय-शक्ति बहुत स्वल्प रहती है। देखना, सुनना, सूंघना, रसलेना, हिताहित विचार आदि व्यवहार में और अग्नि, सर्पादिकों के ज्ञान में इसका इन्द्रियगण अति दुर्बल रहता है। तथापि वह सूतिकागृहकी शय्यापर सोते २ अपनी चारों ओर आंख फार २ देखता, हाथपैर मारता, अनेक प्रकार की चेष्टा करता ही रहता है। ज्योंही बढ़ता और बोलने लगता है। तब देखो कितनी इसमें जिज्ञासा की शक्ति बढ़ती जाती है।

नवीन वस्तु को देखते ही झट पूछता है मा ? यह क्या है ? कभी छोटे बच्चे को लेकर कहीं वाह्य स्थान में निकलो। प्रत्येक नई वस्तु को देख २ कर वह शिशु उतने प्रश्न पूछता जायगा कि उत्तर देने हारे की नाक में दम आजायगी। इस प्रकार वह थोड़े ही वर्षों में अपने परितःस्थित वस्तुओं को वाह्य रूप से जानकर ही छोड़ता है। अति मूर्ख जाति में वह जिज्ञासा यहां ही तक रह जाती है। सभ्य जाति में अध्ययन और मननादिकों के द्वारा वह नानाशाखावलम्बिनी होती चली जाती है। मध्यमकोटि की मानवजाति में इसकी परम दुर्दशा होने लगती है। जिज्ञासा का स्थान साम्प्रदायिक मज़हवी (Religious) विश्वास ले लेता है। मूर्ख नर नारी इसके परम वैरी हैं। धूर्त जनों के भोज्य येही होते चले आए हैं। ऐ मेरे श्रोताओ ! ये वंचक, वकवृत्ति, वैडालव्रतिक जनही व्याघ्र हैं। मनुष्यजातिरूपा अरण्यानी में प्रवेश कर अविवेकी अमन्ता अबोद्धा विश्वासी पुरुषरूप मृग शशकादिकों को पकड़ पकड़ खूब चबाते हैं। वे पशु, मृग, शशक तो अपने शत्रु को झट पहचान भी लेते हैं और उनसे डरके भाग भी जाते हैं। कदाचिदेव विवश होकर उन्हें कवलित होना पड़ता है। किन्तु शोक की बात है कि इस मानव जाति के १०० भागों में से निन्यानवे भाग इतने विचार शून्य हैं कि वे साम्प्रदायिक विश्वासी बन के अपनी विवेक रूप आंखें ऐसी चूर्ण २ करवा लेते हैं कि वे अपने प्रिय हाथ को भी नहीं देखते इस कौतुक में महान् आश्चर्य यह है कि अन्ध अपने को चक्षुष्मान्, बधिर

अपने को श्रोता, मूक अपने को वाचाल, पंगु अपने को धावक और अज्ञानी अपने को परमज्ञानी मानने लगता है। बहुत क्या कहूं वे विश्वासी विहग सर्वथा अविद्या रूपी पिंजरे में बन्द कर दिये जाते हैं। उनको धूर्तजन शुकवत् पढ़ाने लगते हैं कि देखो ? यह तुझे परम गुप्त मन्त्र देता हूं किसी से मत कहना। देख ! दूसरे को कह देने से मन्त्र का प्रभाव जाता रहता है। **नात्र कार्य्या विचारणा। गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयंप्रयत्नतः। एषा शाम्भवी मुद्रा गुप्ता कुलवधूरिवः।** देखो ? यह श्री व्यासजी का बचन है। यह साक्षात् श्री भगवान जी का वाक्य है। यह पार्वती जी की वाणी है। इसमें कभी दुर्भाव न करना। तेरा कुल नष्ट हो जायगा। तू मर जायगा। तेरी सन्तति न रहेगी। इत्यादि २ अनेक शापाभिशाप देके विश्वासी जनों को ठगा करते हैं। ऐ मेरे प्यारे श्रोताओ ? क्या इस अज्ञान से तुम बचना नहीं चाहते ! किसी ने ठीक कहा है कि "**धूर्तैर्जगद् वञ्चितम्**" इस दृश्य को याज्ञवल्क्य ने अन्य प्रकार से दिखलाया है यथा--

अथ योऽन्यां देवतामुपास्तेऽन्योऽसावन्योऽहमस्मीति न स वेद यथा पशुरेवं स देवानां यथा ह वै बहवः पशवो मनुष्यं भुञ्ज्युरेवमेकैकः पुरुषो देवान् भुनक्ति। एकस्मिन्नेव पशावादीयमानेऽप्रियं भवति किमु बहुषु तस्मादेषां तन्न प्रियं यदे तन्मनुष्या विद्युः।

अर्थ—मैं अन्य हूं वह अन्य है ऐसा समझ जो कोई

अन्य देवता की उपासना करता है वह नहीं जानता। जैसा पशु है वैसाही वह देवता का पशु है। जैसे बहुत से पशु मनुष्य पालते हैं वैसे ही एक एक पुरुष देवों को पालता है। यदि किसी के एक ही पशु को कोई चुराले जाय या व्याघ्र मार के खाजाय तो उसको कितना दुःख होगा। यदि इसी प्रकार उसके अनेक पशु चुराए जायं तो कहिये उसको कितना असह्य क्लेश होगा। अतः देवता इसको अच्छा नहीं समझते हैं कि मनुष्य जान जावें क्योंकि जानकार होने से वह भी देव वा देव से भी अधिक होजाता है तब वह ऐसे स्वार्थी देवकी सेवा नहीं करता अतः देव नहीं चाहते कि मनुष्य ज्ञानी बने। आजकल इस आर्य्यावर्त देश में याज्ञवल्क्य जी का वचन ठीक चरितार्थ हो रहा है। अविवेकी सम्प्रदायी विश्वासी जन ही यहां पशु हैं। वंचक स्वार्थान्ध गुरु जी देव हैं। वे अज्ञानी अपने को नीच, पापिष्ठ, मान अपने वंचक गुरुको ईश्वरावतार, धर्म्ममूर्ति, निष्कलङ्क, परमशुद्ध पुरुषोत्तम, साक्षात् भगवान जान उन्हें विधिपूर्वक पूजते हैं, पैर धोते हैं, पैर धो पानी को चरणामृत समझ देह पर सींचते और पीते। उनके चरणों पर प्रेमसे फूल चढ़ाते। मोती सोने चांदी रुपये पैसे भेंट देते हैं, फलों, फूलों, अन्नों तथा अन्यान्य शतशः पदार्थों से उनके गृह भर देते हैं। इतना ही नहीं, किन्तु स्त्रियां तक भी तन, मन, धन गुसाईं जी को अर्पण करती हैं। ऐसे नरपशु उन २ गुरुदेवों को पाल २ कर ऐसे २ हृष्टपुष्ट सांढ़ बना देते है कि वे मदोन्मत्त होके यथेच्छ आहार विहार भोगविलास को ही परमानन्द समझ उद्दण्ड नास्तिक

बन सर्वमानव हितकारी नियमरूप शृंखलाओं को तोड़ डालते हैं। वे गुरुदेव जब २ अपने नरपशु को देखते हैं कि यह कुछ जानने लगा है। यह किसी विवेकी प्रकाश के निकट जाता है तो उन्हें बड़ाही क्लेश होता है। सोचने लगते हैं कि कहीं ऐसा नहो कि यह मेरा पशु कहीं चलाजाय। ऐ विवेकी पुरुषो ? देखो ? श्री याज्ञवल्क्य जी क्या कह रहे हैं। देवता नहीं चाहते हैं कि मेरे पशु ज्ञानी होजांय। मैं निश्चय कहता हूं कि वे सम्प्रदायी गुरुदेव तुमको कभी विवेकी होने नहीं देवेंगे। अतः प्रथम यदि इनकी हथकड़ी से छूटने का यत्न करोगे तब कहीं जिज्ञासा के अधिकारी बनोगे। मैं तुमसे कहता हूं कि कभी जिज्ञासा से मुख मत मोड़ो। जिज्ञासा के लिये ही मानवजाति बनाई गई है। इन परितः स्थित पदार्थों को देख २ कर जिनके हृदय में उनके विशेष बोधार्थ प्रश्न नहीं उठते हैं वे निश्चय पशु हैं। वे दुर्बल हृदय के पुरुष हैं जिनके हृदयमें प्रश्न तो उठते हैं किन्तु किसी ख़ास मज़हव में वा धर्म्म सभा में रहने के कारण उन प्रश्नों को विचार में नहीं लाते, प्रकट नहीं करते। बहुत से ऐसे भी हैं जो जानते हुए भी अजान हैं। वे अपनी २ ज्ञाति, परिवार, मज़हब, वा किसी लोभ, मोह, भय, आदि कारण वश सत्यको प्रकाशित नहीं करसकते। वैसे पुरुष परम शोचनीय हैं अहा ! ! ! मनुष्य किसप्रकार गुलाम बनाया गया है।

ऐ मेरे परमप्रियो ? जो अपने को नीच समझता है वा अपने कर्म्म से आत्मा को दीन दरिद्र बनाता है वह अवश्य

नीच होजाता है । तुम्हारे शरीर में जो आत्मा है वह महान् है वह ज्ञान का राशि है वह अगाध है । गीता में कहा गया है कोई आत्माको न गिरावे। "उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नात्मानमवसादयेत् ।आत्मैवह्यात्मनोबन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः"। गी० ६।५। अतएव ऋषिगण प्रार्थना करते चलेआए हैं " अदीनाः स्याम शरदः शतम्" प्रथम आपको यह जिज्ञासा करनी चाहिये कि यह गुरुदेव मुझ से किस बात में श्रेष्ठ हैं । मेरेही समान, खाते, पीते, स्त्री रखते, पुत्र जनमाते । फिर वे कैसे देव! मैं कैसे मनुष्य! प्रथम तो यह सोचो । अच्छे प्रकार विचारो। यदि उन में कोई विशेष गुण है तो उन के आदर करने में कोई क्षति नहीं । योग्य आदर करो । अति मत करो। यथार्थ में तुम्हारे गुरु आचार्य तो वे हैं जिन्होंने तुम्हे पढ़ाया । जो सदा सदुपदेश देते हैं और स्वयं भी उसके अनुसार चलते हैं । दूसरों के उपदेश देनेहारे तो बहुत हैं किन्तु उसके अनुसार स्वयं चलने हारे बहुत थोड़े हैं ।

कृतकृत्यता—जो अपने को कृतकृत्य समझते हैं वे भी जिज्ञासा के परम बाधक हैं क्योंकि वे खोज से निवृत्त हो जाते हैं । परन्तु मैं कहता हूं, मरण की घड़ी तक तुम अभीष्ट पदार्थों का अन्वेषण करते रहो । मनुष्य जाति को सुशोभित करने हारा केवल अन्वेषण है । जिज्ञासु ही सचमुच मनुष्य है। बहुत कहते हैं कि यदि जन्मभर खोजतेही रहैं तो परमार्थ की प्राप्ति कब करैं । उत्तर—तुमने परमार्थ को क्या समझा है क्या ईश्वर की विभूति का खोज करना परमार्थ नहीं है? तुम पहिलेही

कृतकृत्य कैसे हो सकते । क्या तुमने परमात्मा की सारी विभूतियों की इयत्ता पाली ? यह कभी नहीं होसकता । मनुष्य सर्वदा स्वल्पज्ञ ही रहेगा । परमात्मा परम पिता की सृष्टि का कदापि भी अन्त तक यह जीवात्मा किसी अवस्था में नहीं पहुंच सकता अतः जहांतक अपने जीवन में जितना ढूंढ़ निकालोगे वह तुम्हारे लिये परमार्थ है वह परमानन्दप्रद होगा । मैं कहता हूं कि तुम कभी अपने को कृतकृत्य मत समझो । सर्वदा जिज्ञासु ही बनेरहो ।

जो कोई यह कहते हैं कि बहुत ग्रन्थों के देखने से क्या? बहुत बकने से क्या ? जब अहं ब्रह्मास्मि का ज्ञान होगया तो इस से परे क्या है । एक ही रामनाम काफ़ी है । एकवार गंगा पर्य्याप्त है । एकवार एक आध श्लोक पढ़लेनाही मुक्ति का कारण है । जगत् में तीन ही वस्तु हैं परमात्मा, जीवात्मा, और प्रकृति सो अच्छे प्रकार जाने गए । मैंने एक यज्ञ करलिया परम पवित्र होगया अब क्या करना है इत्यादि नाना अविद्याओं में फंस अज्ञानी अपने को तृप्त मानने लगते हैं इन के ही लिये ऋषि अंगिरा कहते हैं ।

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितंमन्यमानाः । जङ्घन्यमाना परियन्ति मूढ़ा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः । ८ । अविद्यायां बहुधा वर्त्तमाना वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः । यत्कर्म्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात् तेनातुराः क्षीणलोकाश्च्यवन्ते ।

इस विषय में भर्तृहरिने भी अच्छा कहा है।

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धःसमभवम्। तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदवलिप्तं मम मनः। यदा किंचित् किञ्चिद् बुधजन सकाशादवगतम्। तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः।

नारद और जिज्ञासा—छान्दोग्योपनिषद् सप्तम प्रपाठक में यह आख्यायिका आई है। एक समय नारद सनत्कुमार के सन्निधि जा बोले कि भगवन्? मुझे आप उपदेश देवें। सनत्कुमार ने कहा कि आप जितना जानते हैं उतना प्रथम कहजाइये। तब मैं उस के आगे कहूंगा ॥१॥

नारद बोले—मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, चतुर्थ अथर्वण, पञ्चम इतिहास पुराण, वेदों का वेद (व्याकरण) पित्र्य, राशि, दैव, निधि, वाकोवाक्य, एकायन, देवविद्या, ब्रह्मविद्या, भूत-विद्या, क्षत्र विद्या, नक्षत्र विद्या, सर्प देव यजन विद्या ये १८ अष्टादश विद्याएं जानताहूं ॥२॥

हे भगवन्? सो मैं अभीतक केवल मन्त्रवित्ही हूं। आत्मवित् नहीं। आप लोगों के समान पुरुषों से सुनता हूं कि आत्मवित् शोक को तैर जाता है। मैं शोक कर रहा हूं अतः मैं आत्म-वित् नहीं, मुझे शोक से पार उतारें।३। इसके पश्चात् सनत्कु-मार ने कहा कि हे नारद! ये ऋग्वेदादि नाम ही हैं। नाम की जहां तक गति है वहां तक उसकी गति होती है जो नाम

ब्रह्म की* उपासना करता है । आगे नारद और सनत्कुमार में मनोज्ञ सुन्दर संबाद है ।

१ वाणी २ मन ३ संकल्प ४ चित्त ५ ध्यान ६ विज्ञान ७ बल ८ अन्न ९ जल १० तेज ११ आकाश १२ स्मरण १३ आशा १४ प्राण ये चौदह उत्तरोत्तर अधिक माने गए हैं। इसके पश्चात् कहा है कि सत्य ही सब से अधिक है ।

नारदने कहा कि--"सत्यं भगवो विजिज्ञास इति" । हे भगवन् ? मैं सत्य की विशेष रूपसे जिज्ञासा करता हूं ।

सनत्कुमार--जब जानता है तब सत्य बोलता है । विना जाने सत्यनहीं बोलता । जानता हुआ ही सत्य बोलता है अतः हे नारद? विज्ञान ही विजिज्ञासितव्य है ।

नारद—विज्ञानं भगवो विजिज्ञासे । इति । भगवन्? मैं विज्ञान की विशेष रूपसे जिज्ञासा करता हूं ।

सनत्कुमार—जब मनन करता है तब जानता है । विना मनन किए नहीं जानता है, मननही विजिज्ञासितव्य है ।

नारद—मतिं भगवो विजिज्ञासे । इति । मति = मनन

सनत्कुमार—जब श्रद्धा करता है तबही मनन करता है अश्रद्धालु मनन नहीं करता । श्रद्धावान् ही मनन करता है ।

हे नारद ! श्रद्धाही **विजिज्ञासितव्य** है ।

नारद—श्रद्धां भगवो विजिज्ञासे । इति ।

---

* **नोट**—उपनिषदों में ब्रह्मशब्द बृहत्, परमादरणीय, प्रीतिभाजक, इत्यादि अर्थों में प्रयुक्त हुआ है ।

सनत्कुमार--जब निष्ठावान् होता है तब श्रद्धा करता है; अनिष्ठ श्रद्धा नहीं करता। नैष्ठिकही श्रद्धा करता है। हे नारद। निष्ठाही **विजिज्ञासितव्य** है।

नारद—निष्ठां भगवो विजिज्ञासे।।इति।

सनत्कुमार--जब किसी वस्तु को क्रिया में लाकर देखता है तबही निष्ठा होती है अकर्मा कभी निष्ठावान् नहीं होता। हे नारद; कृति ही **विजिज्ञासितव्य** है।

नारद--कृतिं भगवो विजिज्ञासे। इति॥

सनत्कुमार--जब सुख पाताहै तब कर्म करता है। सुख को न पाकर कोई कर्म्म नहीं करता। सुखको पाकरही कर्म करता है सुखही **विजिज्ञासितव्य** है।

नारद—सुखं भगवो विजिज्ञासे। इति।

सनत्कुमार—जो भूमा अर्थात् परम महान् है वही सुख है अल्पमें सुख नहीं। भूमाही सुख है। भूमाही **विजिज्ञासितव्य**है

नारद—भूमानं भगवो विजिज्ञासे इति।

इसके पश्चात् सनत्कुमार ने उपदेश दिया है। कि सर्वव्यापी परमात्मा ही भूमा है। वही सुखस्वरूप है।

नारद—वह परमात्मा है कहां ?

सनत्कुमार—अपनी महिमा में

अर्थात् यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सूर्य, चन्द्र, पृथिवी मनुष्य पशु आदि उसकी महिमा है। इसी में प्रतिष्ठित है। इत्यादि

नारद और सनत्कुमार का संवाद है। ऐ जिज्ञासु पुरुषो ! प्रथम तुम देखते हो कि नारद जी कितनी विद्याएं जानते थे। तौ भी इन्हें सन्तोष नहीं। ये पुनः गुरु के समीप जाते हैं और इनसे परमार्थ के उपदेश ग्रहण करते हैं। क्या तुमने नारद से भी अधिक जान लिये जो जिज्ञासु बनने में संकोच करते हो। यदि तुम में से दो एक सनत्कुमार बन गए हैं तौ भी क्या क्षति तौ भी संतुष्ट न होना चाहिये वे सनत्कुमार भी तो सदा मनन में ही लगे रहते थे। *

विराट् और वैश्वानर रूप—सनत्कुमार कहते हैं कि यह ब्रह्म अपने महिमा में प्रतिष्ठित है। सूर्य्य से लेकर तृणपर्य्यन्त ब्रह्म का महिमा है। अतः सूर्य्य, चन्द्र, नक्षत्र, पृथ्वी

---

* नोट—यद्यपि इन महात्माओं का इतिवृत्त यथार्थ रूपमें नहीं पाया जाता। पुराणों ने इनके विषय में अनेक गल्प कल्पित किए हैं। पुराणों के अनुसार ये ब्रह्मा के पुत्र कहे गए हैं सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार ये चार भाई माने जाते हैं। यह ध्यान रखना चाहिये कि जितने अच्छे साधु महात्मा हुए वे सब ही प्रायः विरंची के साक्षात् तनय कहे गए हैं। पुराणों की ऐसी कल्पनाएं त्याज्य हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये सनत्कुमार कोई अनुभवी मननशील हुए हैं। किसी नवीन विद्या के बडे भारी आविष्कर्त्ता थे। धीरे २ ये परमसिद्ध, सदा एकही रूप में विद्यमान मान-लिए गए इनमें से तीन भाइयों के नाम अभीतक तर्पण की पद्धति में आते हैं और मनुष्य मानकर इनका तर्पण होता है यथा—

मनुष्यांस्तर्पयेद्भक्त्या ऋषिपुत्रानृषींस्तथा। सनकश्च सनन्दश्च तृतीयश्च सनातनः॥ कपिलश्चासुरिश्चैव वोढुः पंचशिखस्तथा। सर्वेते तृप्तिमायान्तु मद्दत्तेनाम्बुना सदा इत्यादि

प्रभृतियो में से जितना भाग जो जानेगा वह मानो उतना ब्रह्मके महिमा कोही जानेगा । पुनः विराट्रूप में वर्णन आता है कि मानो, ब्रह्मका चरण यह वसुन्धरा है, नयन दिनमणि, श्रुति दिशाएं, प्राण वायु है, आस्य अग्नि है, महाकाशउदर है । इत्यादि--

छान्दोग्योपानिषद् पञ्चम प्रपाठक, एकादश खण्ड से एक आख्यायिका आरम्भ होती है कि, प्राचीनशाल औपमन्यब, सत्ययज्ञ पौलुषि, इन्द्रद्युम्न भाल्लवेय, जन शार्कराक्ष्य और बुडिल अश्वतराश्वि ये सब महाशाल (बड़ीपाठशालावाले) और महा श्रोत्रियथे । मिलकर विचारने लगे कि " **कोनु आत्मा किं ब्रह्मेति** " आत्मा और ब्रह्म क्या वस्तु है । निश्चय न कर सके । तब उस समय के सुप्रसिद्ध उद्दालक आरुणि ऋषि के निकट आए । ये भी उनके सन्देहों को मिटाने में अपने को असमर्थ देख उन्हे साथले केकैय अश्वपति के निकट पहुंचे । राजा अश्वपति उन की यथाविधि पूजाकरवा कहने लगे हे परमपूज्यो ! मेरे जनपद में १ स्तेन २ कदर्य ३ मद्यप ४ अनाहिताग्नि और ५ अविद्वान् नहीं हैं और षष्ठ स्वैरी (व्यभिचारी) नहीं हैं तो स्वैरिणी (व्यभिचारिणी कुट्टिनी) कहां से होंगी। हे पूज्यो ! मैं यज्ञ करनेहारा हूं आप यहां निवास करो । एक २ ऋत्विज को जितना दूंगा उतना आप को भी दूंगा । राजाके इस बचन को सुन वे सब बोले कि पुरुष जिस प्रयोजन केलिये आवे वही उसे देना उचित है । आप इस समय वैश्वानर आत्मा को जानते हैं । वही हमको देवें राजाने कहा कि मैं प्रातः काल कहूंगा वे सब भी समित्पाणि हो पूर्वाह्ण में राजा के समीप

पहुंचे । महाराज ने यथोचित रूप से वैश्वानर आत्मा के विषय में उपदेश दिया है, मैं यहां अतिसंक्षेप से उस सम्वाद को दिखलाता हूं ।

अश्वपति—हे औपमन्यव ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

औपमन्यव—राजन् ! मैं द्युलोक की ही उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का तो मूर्धामात्र है ।

हे सत्ययज्ञ ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

सत्ययज्ञ—राजन् ! मैं आदित्य की उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का तो चक्षुमात्र है ।

हे इन्द्रद्युम्न ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

इन्द्रद्युम्न—राजन् ! मैं वायु की ही उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का तो प्राणमात्र है ।

हे जन ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

जन—राजन् ! मैं आकाश की उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का तो मध्य देह मात्र है ।

हे बुडिल ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

बुडिल—राजन् ! मैं जल की ही उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का तो वस्तिमात्र है ।

हे उद्दालक ! आप किस आत्मा की उपासना करते हैं ?

उद्दालक—राजन् ! मैं पृथिवी की उपासना करता हूं ।

अश्वपति—यह आत्मा का चरणमात्र है ।

राजा ने इस प्रकार उनकी उपासनाओं का खण्डन करके कहा कि आप सब अभी तक एक २ अवयव मात्र की उपासना में तत्पर हैं यह उचित नहीं । द्युलोक से लेकर पृथिवी तक एकही वैश्वानर है। हां,एक २ अवयव की उपासना से भी आप कल्याणभागी हैं । यदि सम्पूर्ण वैश्वानर को जानें तो बहुत फल पावेंगे । राजा के उपदेश का मुख्य तात्पर्य यह है कि प्रथम ऐ महाश्रोत्रियो ! इस अपने शरीर को ही वैश्वानर समझिये । इस देह में शिर द्युलोक, नयन आदित्य, प्राण वायु, मध्यदेह आकाश, मूत्रस्थान जल और पैर पृथिवी है। छाती ही वेदि है । लोम ही कुशहै । हृदय ही गार्हपत्य अग्नि है । मन ही अन्वाहार्य्यपचन अग्नि है । मुखही आहवनीय अग्नि है । ऐ श्रोत्रियो ! प्रथम इसके महत्त्व को जानिये पश्चात् बाह्य जगत की गवेषणा कीजिये तबही पूर्ण कल्याण भागी होवेंगे । निःसन्देह जो कोई अपने आत्मा के महत्त्व को नहीं जानता है वही वास्तव में अधम है । इसके पश्चात् इस पृथिवी पर के पदार्थों का अच्छे प्रकार अध्ययन करे ।

शोक की बात है कि अज्ञानी जन स्वर्ग की बड़ी २ लम्बी २ बातें करेंगे परन्तु जिस पृथिवी पर वे रहते हैं वहां की सच्ची २ बात जानने के लिये उद्योग न करेंगे । ये पृथिवी, हिमालय पर्वत, समुद्र, वनस्पति, पशु, पक्षी, आदि सहस्रों पदार्थों को वास्तव रूप में नहीं जानते । ऐ मनुष्यो ! प्रथम पैर का ही बोध उत्पन्न करो, धीरे २ आकाशस्थ मेघ, वायु, विद्युत,

प्रकाश, चन्द्र, सूर्य्य, आदि पदार्थोंके तत्व सीखो ! जब समूह के विज्ञान में गवेषणा करोगे तब तुम ब्रह्मकी विभूति के अति क्षुद्र अधिकारी माने जाओगे ।

इस आख्यायिका से सिद्ध है कि इस अनन्त ब्रह्माण्ड महा विराट् रूप में से जो जितना जानेगा वह मानो उतना ब्रह्मके ही रूप को जानेगा । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का बोध कदापि नहीं हो सकता सूर्य्य से लेकर पृथिवी तक प्रथम जानने का प्रयत्न करें । पुनः ऐसे २ सूर्य्य सहस्रशः, पृथिवी सहस्रशः हैं जहां तक हो उन्हें भी जाने । यहां ध्यान रखना चाहिये कि उपासना शब्द का अर्थ अध्ययन है जब ऐसे २ महाशाल महा श्रोत्रिय आपके पूर्वज एक २ पदार्थ के विज्ञान में अपना संपूर्ण जीवन लगादेतेथे तौभी सन्तुष्ट न होकर पुनः जिज्ञासा किया करतेथे तब क्या आप इस परमोद्योग से सदा के लिये बंचित ही रहेंगे ! आपने अभी क्या जाना है । अतः सदा जिज्ञासु बनो !

वेदान्त के कर्त्ता बादरायण मीमांसा-कर्त्ता जैमिनि ये दोनों "अथातो ब्रह्मजिज्ञासा । अथातो धर्म्म जिज्ञासा ।' ऐसा प्रतिज्ञासूत्र लिखते हैं वे यह नहीं कहते हैं कि हम ब्रह्म और धर्म को जानते हैं । वे ब्रह्म और धर्म की जिज्ञासा में कितने दिन लगे रहे होंगे और कितने दिनों के मनन के पश्चात् ग्रन्थ लिखकर तैयार किए होंगे । अतः ऐ भारत बासियो ! अपने पूर्वजों के महान् कार्य पर दृष्टि डालो और जिज्ञासु बनो ।

वेद में जिज्ञासा ।

स्वयं आम्नाय (वेद) जिज्ञासा की ओर मनुष्य को भूयोभूयः लेजाते हैं । मनुष्य की प्रतिभा तीक्ष्ण हो, सूक्ष्माति सूक्ष्म वस्तु में इसकी अप्रतिहतगति हो और आत्मचेष्टा की परम काष्ठातक पहुंचे इसकारण श्रुतियां परमहितकारिणी होके मनुष्यको इस गवेषणा की ओर लेजाती हैं ।

एक स्थान में वेद कहते हैं कि वह विश्वकर्म्मा परमात्मा किस आधार पर खड़ा होकर और किस आरम्भिक पदार्थ से इस जगत् को बनाता है । यथा—

१–किंस्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित् कथासीत् । यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्म्मा विद्यामौर्णोन् महिना विश्वचक्षाः ।
ऋ०१०।८१। २।

जैसे लोकमें देखाजाता है कि कुम्भकार किसी स्थान पर बैठ मृत्तिका ले चाक के ऊपर यथाभिमत घट और विहगादि की मूर्तियां वनाया करता है वैसेही क्या ईश्वर भी कहीं आसन लगा, जगत वनाने की सामग्री ले सूर्य्य चन्द्र पृथिवी प्रभृति अनन्त सृष्टि रचा करता है ? इसी विषय को प्रश्न और उत्तर रूपसे कहते हैं (स्वित्) वितर्क अर्थात् इस ऋचाके द्रष्टा ऋषि वितर्क करते हैं कि (अधिष्ठानम्+किम्+आसीत्) पृथिवी से लेके द्युलोक तक सृजन कहते हुए परमात्मा का बैठने का स्थान कौनथा ? क्योंकि लोक में निरधिष्ठान हो के कोई भी कुछ नहीं

करता अतः ईश्वर का भी कोई अधिष्ठान होना उचित है सो वह स्थान कौन है ? जहां बैठ के जगत् रचता है। (स्वित्+आरम्भणम्+कतमत्+आसीत्) पुनः वितर्क करते हैं कि आरम्भ करने की सामग्री क्या थी (कथा) क्रिया भी किस प्रकार की थी अर्थात् निमित्त कारण कैसा था यतः जिस काल में (भूमिम् द्याम्) भूमि और द्युलोक को बनाता हुआ (विश्वकर्म्मा) सकल सृष्टि कर्त्ता (विश्वचक्षाः) सर्व द्रष्टा परमात्मा (महिम्ना) अपने महिमा से (द्याम्+भूमिम्) द्युलोक और भूमि को (वि) विशेष रूपसे (और्णोत्) आच्छादित अर्थात् बनारहाथा उस समय उसकी बैठक और सामग्री कौनसी थी ? विश्वकर्म्मा = विश्वकर्त्ता = सबके बनाने हारा। विश्वचक्षा = विश्व = सब। चक्षा = देखने हारा। और्णोत् = ऊर्णुञ् आच्छादने।

वहां ही पुनः कहते हैं कि वह कौनसा वन और वृक्ष है जिसको काट कर यह संसाररूप भवन बनाता है ? हे मनीषी पुरुषो ! यह भी विश्वकर्म्मा से पूछो कि वह इन समस्त भुवनों को पकड़े हुए किसपर खड़ा है। यथा-

२—किंस्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावा-पृथिवी निष्टतक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन् ॥ ऋ० १०।८१।४

(स्वित) द्रष्टा ऋषि इस ऋचा के द्वारा वितर्क करते हैं (किम्+वनम्) वह कौन वनहै? (कः+उ+सः+वृक्षः) वह कौन वृक्ष है ? (यतः+द्यावापृथिवी) जिस वन और वृक्ष से विश्व-

कर्म्मा ने द्युलोक और पृथिवी को (निष्टतक्षुः) काटकर अलंकृत किया है (मनीषिणः) हे मनीषी विद्वानों! (मनसा+तत्+इत्+उ) मनसे पर्य्यालोचना करके उनको भी (पृच्छत) पूछिये। (भुवनानि+धारयन्) सम्पूर्ण भुवनों को पकड़े हुए वह विश्वकर्म्मा (यद्+अधि+अतिष्ठत्) जिसके ऊपर खड़ा रहता है अर्थात् इस जगत को पकड़ कर वह किस आधार पर खड़ा रहता है। ऐ विद्वानो! इस बात को भी तो कभी पूछो॥

तीसरी जगह कहते हैं कि आश्चर्य की बात है इसको कौन जानता है कौन कह सकता है कि ये विविध सृष्टियां कहां से आई सब ही पीछे उत्पन्न हुए हैं इसका कारण कौन जानता है कि वह सृष्टि कहां से आई यथा—

३—को अद्धा वेद क इह प्रवोचत् कुत आजाता कुत इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव॥ ऋ० १०। १२९। ६

(कः+अद्धा+वेद) कौन इसको निश्चय रूप से जानता है (कः+इह+प्र+वोचत्) कौन यहां इसका व्याख्यान कर सकता है (कुतः+आजाता) यह सृष्टि कहां से आगई (कुतः+इयम्+विसृष्टिः) कहां से यह विविध प्रकार की सृष्टियां बनीं? (देवाः) विद्वद्गण वा सूर्यादि देव सबही (अस्य+विसर्जनेन+अर्वाग्) इस सृष्टि के बनने के पश्चात् हुए हैं (अथ+कः+वेद+यतः+आ+बभूव) तब कौन जानता है कि यह सृष्टि कहां से उत्पन्न हुई है?

सूर्य को अस्त होते देख कहते हैं कि वह सूर्य कहां चला जाता है । इसके किरण अब किस लोक को प्रकाशित करते होंगे । यथा—

४—क्वेदानीं सूर्य्यः कश्चिकेत कतमां द्यां रश्मिरस्याततान ॥ ऋ० १ । ३५ । ७

अब सूर्य कहां है ? इसको कौन जानता है ? किस द्युलोक में इसके किरण अब फैल रहे हैं ।

यह गौ कृष्णा है किन्तु इसका दूध श्वेत क्यों ? यथा—

५—सनेमि सख्यं स्वपस्यमानः सूनुर्दाधार शवसा सुदंसाः । आमासु चिद्दधिषे पक्वमन्तः पयः कृष्णासु रुशद्रोहिणीषु ॥ १ । ६२ । ६

(स्वपस्यमानः) सुन्दर कर्म्म करता हुआ (सुदंसाः) और सदा शोभन कर्म्म करनेहारा (शवसा+सूनुः) बल का पुत्र जो यह इन्द्र=जीवात्मा है (सनेमि+सख्यम्) वह प्राचीन मित्रता (दाधार) रखता है । हे इन्द्र ? आप (आमासु+चित्) अपरिपक्व गौवों के (अन्तः) भीतर (पक्वम्+दधिषे) परिपक्व दूध को स्थापित करते हैं (कृष्णासु) काली और (रोहिणीषु) लाल गौवों में तद्विरुद्ध (रुशद्+पयः) देदीप्यमान श्वेत दूध बनाते हैं ।

यह पृथिवी और यह द्युलोक है इन दोनों में कौन ऊपर और कौन नीचे इस प्रकार के कोई ऋषि वेदद्वारा प्रश्न करते हैं यथा—

६—कतरा पूर्वा कतरा परायोः कथा जाते कवयः कोवेद ।

(आयोः) इस पृथिवी और द्युलोक में से (कतरा+पूर्वा) कौन पहिली या ऊपर है (कतरा+परा) और कौन पिछली या नीचे है (कथा+जाते) वे दोनों कैसे उत्पन्न हुए (कवयः+कः+वेद) हे कविगण इस को कौन जानता है ।

कोई ऋषि पूछते हैं कि जो नक्षत्र बहुत ऊंचे रात्रि में दीखते हैं वे दिन में कहां चले जाते हैं । यथा—

७—अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा
नक्तं ददृश्रे कुह चिद्दिवेयुः । ऋ० १ । २४ । १०

(अमी) ये (ये) जो (ऋक्षा) नक्षत्रगण (उच्चाःनिहितासः) ऊंचे स्थापित (नक्तम्+ददृश्रे) रात्रि में दीखते हैं (दिवा) दिन में (कुह+चित्+ईयुः) कहां चलेजाते हैं?

वे स्त्रियां हैं किन्तु उन्हे पुरुष कहते हैं आंखवाला देखता है अन्धा नहीं देखता । जो पुत्र विद्वान् है वह इसको जानता है । जो उनको जानता है वह पिता का भी पिता होता है । यथा—

८—स्त्रियः सतीस्तां उ मे पुंस आहुः पश्यदक्षण्वान् वि चेतदन्धः । कविर्यः पुत्रः स ईमा चिकेत यस्ता विजानात् सपितुष्पितासत् । ऋ० १ । १६४ । १६ ।

(सतीः स्त्रियः) जो उत्तम स्त्रियां हैं अर्थात् सर्वत्र विस्तृत

हो के लोगों को मोहित कर रही हैं (ताम्+उ पुंस+आहुः) उन्हीं को कोई २ पुरुष कहते हैं (अक्षरावान्+पश्यत्) ज्ञान दृष्टि वाला देखता है (अन्धः) अन्ध पुरुष (न+वि+चेतत्) नहीं जानता।(यः+कविः+पुत्रः) जो विद्वान् पुत्र है (सः+ईम्) वही (आचिकेत) सब प्रकार से जानता है (यः+ता+ विजानात्) जो उनको जानता है (सः +पितुः +पिता +असत्) वह पिता का पिता होता है।

इतनाही नहीं किन्तु कई एक स्थानों में द्रष्टा ऋषि वेदद्वारा कहते हैं कि मैं अज्ञानी हूं नहीं जानता पवित्र मन से पूछताहूं यथा—

६—पाकः पृच्छामि मनसा विजानन्देवानामेना निहिता पदानि। वत्से बष्कयेऽधि सप्ततन्तून्वि तत्निरे कवय ओतवा उ। ऋ० १। १६४।५

(पाकः)पक्तव्य अर्थात् परिपक्कमति मैं (मनसा+अविजानन्) सुसंस्कृत समाहित मन से भी उस के गहन तत्त्वको न जानता हुआ (पृच्छामि) पूछता हूं क्योंकि (एना+पदानि) ये अतिगहन और सन्देहास्पदतत्त्व (देवानाम्) परमविद्वान् पुरुषों के समीप भी (निहितानि) छिपे हुये हैं।

दीर्घतमा ऋषि कहते हैं कि मैं अज्ञानी हूं मैं विद्वान् नहीं हूं। मैं विद्वानों से पूछता हूं। इन षट् संसारों को किसने एक कर रखा है। यथा—

१०—अचिकित्वाञ्चिकितुषश्चिदत्र कवीन्पृच्छामि विद्मने न विद्वान्‌ वि यस्तस्तम्भ षळिमा रजांस्यजस्य रूपे किमपि स्विदेकम्‌ । ऋ० १।१६४।६

(अचिकित्वान्) देवतत्त्व को न जानता हुआ मैं (चिकितुषः+चित्) परमार्थ तत्वके जानने हारे (कवीन्+अत्र) कवियों को यहां (पृच्छामि) पूछता हूं (न+विद्वान्) मैं विद्वान् नहीं हूं (विद्मने) जाननेकेलिये पूछता हू (यः) जो परमेश्वर (इमान्+षट्+रजांसि) इन छःलोकों को (वि+तस्तम्भ) अच्छे प्रकार अपने नियमों में बांधे हुए हैं (अजस्य+रूपे) उस परमात्मा अजन्मा के स्वरूप में (एकम्) एक ही (किमपिस्वित) कुछ है।

सौचकि ऋषि कहते हैं कि मैंने पाप किया है। मैं नहीं जानता कि इसका कौनसा प्रायश्चित्त होगा। यथा—

११—किं देवेषु त्यज एनश्चकर्थाग्ने पृच्छामि नु त्वामविद्वान्। ऋ० १० । ७९ । ६

मूर्धावान् आङ्गिरस कहते हैं हे पितरो! हे कविगणो! मैं अज्ञानी होकर पूछता हूं। आप को क्लेश पहुंचाने केलिये नहीं किन्तु विज्ञान के लिये मैं जिज्ञासा कर रहा हूं। अग्नि कितने हैं? सूर्य कितने हैं? उषए कितनी हैं? जल वा अन्तरिक्ष व्यापक पदार्थ कितने प्रकार के हैं।

१२—कत्यग्नयः कति सूर्यासः कत्युषासः कत्यु स्विदापः। नोपस्पिजं वः पितरो वदामि पृच्छामि वः कवयो विद्मने कम्॥ ऋ० १० । ८८ । १८ ।

मैं आपको कितने उदाहरण दिखलाऊं ऋषि गणों में से एकही नहीं किन्तु प्रायः सब ही जिज्ञासा का भाव प्रकट करते ह । परमात्मा ने मानवजाति में जो मननशक्ति दी है उसी ने इस को प्रेरणा करके अद्भुत २ बातें खोज करवाई हैं खोज होरहे हैं और होते रहेंगे । ऐ विद्वद्वर्गों! गवेषणा ही ने मानव-जाति को पशुदशा से मनुष्यदशा तक पहुंचाया है ।

॥ इति जिज्ञासाध्यायः ॥

ॐ जिज्ञास्याऽध्याय २ ॐ

जिस पदार्थ की जिज्ञासा की जाती है उसको जिज्ञास्य कहते हैं । अब प्रथम किसकी जिज्ञासा करनी चाहिये इसके उत्तर में यह कहा जाता है कि प्रथम सब से परमोपयोगी रात्रिन्दिवा कार्य में आनेवाले जो २ पदार्थ हैं उनको अच्छे प्रकार जानो। जैसे जल । किन २ पदार्थों से जल बना हुआ है ? पृथिवी से ऊपर जल कैसे चढ़ता वा वाष्प होता है? और वाष्प होके मेघ रूप में और मेघरूप से वर्षारूप में कैसे आता है ? पुनः कभी २ देखते हैं कि वही जल छोटे २ श्वेत उपल पत्थर—बनौरी बन२ कर मेघ से गिरता है इसका क्या भेद है? इसी प्रकार कभी कुहक (कुहेसा, कुहरा) लोगों की दृष्टि घेर लेता है। कभी रात्रि में हिम इतनी गिरती है कि समस्त वृक्ष, लताएं, गेहूं, जौ आदि फसलें सूख जाती हैं । इसका क्या कारण ? जब कोई डुब्बा किसी कूए वा नदी में डूबता है और बीस २ हाथ जलके नीचे चला जाता है तब इस डुब्बे को जल का बोझा क्यों नहीं प्रतीत होता । कोई

वस्तु पानी में तैर जाती और कोई डूब जाती है इसका क्या कारण, इत्यादि अनेक वार्त्ताएं प्रथम जल के सम्बन्ध में जानो। जो लोग कहते हैं कि जल एक स्वतः स्वतन्त्र तत्त्व है वे नहीं जानते। ऐसेही एक इन्द्र नामका देव मेघ वर्षाया करता है। मेघ के ऊपर जो कभी २ धनुष सा प्रतीत होता है वह इन्द्रधनुष है। मेघ में जो महागर्जन होता है वह इन्द्र गर्जता है। जो बिजुली चमकतीहै वह रुद्राणी है जो बिजुली गिरती है वह वलि को मारने के लिये इन्द्र फेंका करता है। मिट्टी के महादेव पूजने से वर्षा होती है वा, जप, तप, करने से वा मेंडकों को मेघ देवता के नाम पर मार के चढ़ाने से वृष्टि होती है इत्यादि जो सहस्रों बातें देशमें फैली हुई हैं वे सबही मिथ्या हैं या सत्य हैं उनकी परीक्षा करो। ऐ प्यारे ? खोजो मेघ होने का यथार्थ कारण क्या है इसके सम्बन्ध में आधुनिक बड़े विज्ञान शास्त्र पढ़ो।

जल के पश्चात् वायु परम आवश्यक पदार्थ है। वायु भी स्वतन्त्र तत्त्व नहीं। कईएक पदार्थ मिलकर वायु बना हुआ है। हम सब सदा देखा करते हैं कि ग्रीष्म तथा कभी २ वर्षा ऋतु में वायु बहुत वेग से चलता है। हेमन्त और शिशिर में मन्द पड़ जाता है। किसी २ देश में पूर्वीय और किसी २ में पश्चिमीय वायु सदा चला करता है। समुद्र का वायु कुछ विलक्षण होता है। इन सब का क्या कारण ? वायु को आंख से नहीं देखते किन्तु जब वेग से बहने लगता है तो बड़े २ वृक्ष और मकान गिर पड़ते हैं इस में ऐसी शक्ति कहां से आती है? वायुमें गुरुत्व है या नहीं? हरएक आदमी के ऊपर वायु का बोझा कितना रहताहै। बोझा

रहने पर भी हम लोगों को बोध क्यों नहीं होता ! इस आश्चर्य बात को क्या आप जानना नहीं चाहते। पृथिवी से ऊपर कितनी दूर तक यह वायु है वायु के न रहने पर क्या हम क्षणमात्र भी जी सक्ते हैं।

इस के द्वारा शब्द कसे दूर २ फैलते। इस के बिना अग्नि क्यों नहीं जलता शब्द क्यों नहीं होता। यदि एक कोठरी से किसी यन्त्र के द्वारा वायु निकाल दिया जाय तो वहां न तो ध्वनि होसकती और न अग्नि जलता इसका क्या कारण इत्यादि वायु में भगवान् की लीला का अन्वेषण कीजिये। ज्यों २ वायु सम्बन्धी विज्ञान में निपुण होते जायंगे त्यों २ परमात्मा में परम प्रीति होती जायगी। जो कोई कहते हैं कि वायु एक चेतन देव है वह कभी २ मनुष्य का रूप धर स्त्रियों पर मोहित हो उनके पातिव्रत को भग्न करता है। जैसे केसरी की स्त्री अंजना और वायु की कथा है। यह वायु ४९ भाई हैं इत्यादि मिथ्या २ कथाएं सुना २ कर जगत् को भ्रम जाल में फसा रहे हैं, वे स्वार्थान्ध अज्ञानी मनुष्यजाति के महाशत्रु हैं। जिज्ञासुओ ! जैसे जल एक जड़ वस्तु है वैसे ही यह पवन भी जड़ है, यह कभी मनुष्य का रूप धारण नहीं कर सकता। वायु विज्ञान पढ़ो आपको सब कुछ का ज्ञान होगा।

इसके पश्चात् जिस पृथिवी के ऊपर आप निवास करते हैं उसको अच्छी तरह से जानें। परमात्मा की अद्भुत लीलाएं इस पृथिवी में देखेंगे। यद्यपि उसकी विभूतियां सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि में भी बहुत ही आश्चर्य जनक हैं, तथापि वे सब दूर हैं

सुगमता से आप उन्हें नहीं जान सकते। पृथिवी सम्बन्धी विद्याएं बहुत सरलता से जान सकते हैं। इसकी लम्बाई, चौड़ाई, मोटाई कितनी है यह गोल या चटाई के समान चिपटी है। सूर्य की चारों तरफ करीब ३६५ दिन में कैसे घूम आती है। इसके घूमने से दिन रात्रि कैसे बनजाते। ऋतु कैसे परिवर्त्तन होते। उत्तरायण और दक्षिणायण क्योंकर होते। अथवा यह घूमती है या नहीं। यदि नहीं घूमती तो किस आधार पर है यह नीचे या ऊपर जा रही है। आप देखते हैं कि कहीं पृथिवी के भीतर से अग्नि और कहीं गर्म जल निकल रहा है। कभी भूकम्प होता। कभी समुद्र का पानी हटकर एक द्वीप बन जाता। इसके विपरीत कहीं सूखी जमीन समुद्र बन जाती। कहीं सदा रात्रि के समान ही रहता। कहीं ६ कहीं ५ कहीं ४ कहीं ३ कहीं २ कहीं १ ऋतु होती है। इन सब का क्या कारण? पृथिवी के ऊपर विचित्र घटनाओं को देखकर भी क्या आपके हृदय में जिज्ञासा उत्पन्न नहीं होती? सूर्य पूर्व से पश्चिम आते हुये दीखता है क्या यह सत्य है क्या कभी आपके हृदय में ऐसा प्रश्न उठता है? जब आप पृथिवी सम्बन्धी विद्याएं पढ़ेंगे तो आपको विस्पष्ट मालूम होगा कि सूर्य पूर्व से पश्चिम को नहीं जाता। जैसे नौकास्थ पुरुष को अपने विपरीत वृक्ष आदि चलते हुए प्रतीत होते हैं वैसे ही पश्चिम से पूर्व की ओर भ्रमण करती हुई पृथ्वी के ऊपर स्थित मनुष्यों को सारे ग्रह पश्चिम की ओर आते हुये प्रतीत होते हैं। पुनः यह भूमि जल से कितनी घिरी हुई है। समुद्र किस रूप से इसके ऊपर स्थित हैं।

समुद्रों के कारण भूमि पर क्या २ परिवर्त्तन होता है। कैसे समुद्र से वाष्प चलकर आकाश में मेघ बन वर्षा होने लगती है। ज्वारभाटा क्योंकर हुआ करता है इत्यादि सहस्रशः बातें पृथिवी के सम्बन्ध में अध्ययन कीजिये। यह पृथिवी पहले कैसे बनी फिर धीरे २ इस के ऊपर जीवजन्तु कैसे होगये। मनुष्य कहां से आगये। पर्वत, नदियां, समुद्र, कैसे बन गये! क्या इत्यादि बातों के जानने के लिये आप के मन में उत्कण्ठा नहीं होती? यही तो ईश्वर की परम विभूति है। भूगोल भूगर्भ विद्या, वनस्पतिशास्त्र, प्राणि शास्त्र, प्राणियों के क्रमाभ्युदयशास्त्र इत्यादि विद्याओं के अध्ययन से परमात्मा के अकथनीय कौशल का किञ्चित् २ बोध होने लगता है।

इस प्रकार प्रथम पृथिवीस्थ पदार्थों की पूरी जिज्ञासा कीजिये। तदनन्तर ऊपर दृष्टि दीजिये। सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों की ओर दृष्टि दीजिये। जिन नक्षत्रों को यहां से बहुत ही छोटे २ टिमटिमाते हुए देखते हैं क्या सचमुच इतने ही छोटे या बहुत ही बड़े हैं? इस पृथिवी से वे कितनी दूरी पर हैं? वे हमारे ऊपर क्यों नहीं गिर पड़ते! पृथिवी से सूर्य चन्द्र कितने दूर व कितने लम्बे चौड़े हैं वे हैं क्या? ऐ मनुष्यो इन बातों को जानिये। मिथ्या २ बातों में क्योंकर फसेहुए रहते हैं। आप प्रथम उनके विषय में प्रश्न कीजिये। जानिये और बारम्बार विचारिये जिन को आंखों वा अन्यान्य इन्द्रियों से वा किसी दूरनिरीक्षण और सूक्ष्म वस्तु निरीक्षण यंत्रों से देखते वा अनुभव करते हैं। आप अपनी चारोंतरफ़ स्थित वस्तुओं

को जानैं। परन्तु शोक की बात है कि प्रथमही आप उन विषयों को पूछना वा जानना चाहते हैं जिनको आप देख नहीं सकते। जैसे वे बतलादिए जायंगे वैसे ही आपको मान लेने पड़ेंगे, सोचिये तो वैसे प्रश्नोंसे आप को अभीं क्या प्रयोजन ! आप जानना चाहते हैं कि शरीर को छोड़ यह जीव कहां जाता कैसे जाता ? पृथिवी पर कितने दिन रहता। पुनः कहां जाता। कोई इसको साथ ले जाता वा एकाकी ही यात्रा करता है। देह छोड़ते ही क्या दूसरा देह पालेता या कहीं जाकर स्वर्ग वा नरक में वास करता रहता है। यह जीव कैसा हैं। कितना छोटा, कितना वड़ा, कितना मोटा इत्यादि अज्ञेय वस्तु को आप जानना चाहते हैं। किन्तु इस जीव में कितनी शक्ति है क्योंकर कोई बुद्धिमान् और कोई मूर्ख बना रहता हैं। क्योंकर बुद्धिमानों ने ऐसी २ विद्याएं निकालीं, कैसे इस जीवात्मा से रेल, तार, विमान इत्यादि सहस्रशः विद्याएं निकलीं, कैसे उत्तम २ काव्य शास्त्र बनगए इत्यादि प्रत्यक्ष वस्तुओं की जिज्ञासा नहीं करते। आप सोचें तो किसी ने आप से कहदिया कि जीवात्मा अणु है वा विभु है वा मध्यम परिमाण है। आप अब क्या मानेंगे। आंख से देखते नहीं। पदार्थ ज्ञान बिना तर्क भी ठीक नहीं हो सकता। इस अवस्था में केवल विश्वासकरनाही पड़ेगा। अब ऐसे २ प्रश्नों से क्या प्रयोजन पुनः किसीने कहा कि यह जीवात्मा शरीर को छोड़ एक ही दिन में चार लाख कोश दूर यम पुरी में पहुंच जाता है ' दूसरे ने कहा कि नहीं ? यह शरीर को छोड़ प्रथम दिन बीस हजार कोश चलता है। दूसरे

दिन चालीस हजार कोश, तीसरे दिन साठ हजार कोश इस प्रकार दश दिन चलकर यम पुरी में जा पहुंचता है। किसी ने कहा कि यह सब झूठी बात है। आत्मा न कहीं जाता न आता। यहां ही रहता है। किसी शरीर में प्रवेश कर जाता इत्यादि। तीसरे ने आके कहा कि यह भी मिथ्या है। आत्मा कोई वस्तु ही भिन्न नहीं है। यह भ्रम मात्र है ब्रह्म ही जीव है। यह भी कथन मात्र है। न मैं हूं न तू है। सारी माया है॥ माया क्या है? अरे माया भी कोई वस्तु नहीं। किसी ने कहा कि ये सब पागल हैं। जीव एक शरीरसे पृथक् वस्तुहै। परन्तु हम नहीं कह सकते हैं कि वह कैसा है। अब आप विचार करें कि जहां ऐसी अंधेर लीलाएं हैं वहां आप क्या जान सकते हैं हां, मूर्ख, मंदमति, पुरुषों के लिये ऐसे ही विषय रोचक होते हैं। ऐ मेरे धार्मिक पुरुषो? प्रथम आप प्रत्यक्ष पदार्थों की जिज्ञासा करें अप्रत्यक्ष की ओर न जाएं। जब देश में विद्या नष्ट होजाती पाखण्डी, धूर्त, स्वार्थी उत्पन्न होते हैं तब वे मूर्खों को फंसाने के लिये अनेक जाल बनाते हैं इस लिये आप कभी ऐसी बातों की ओर न जायं जिन को आप देखते नहीं।

पदार्थ ज्ञान की परमावश्यकता।

चारोंवेद, छहों अङ्ग, छहों उपाङ्ग, धर्मशास्त्र तथा १८ अष्टादश पुराण इत्यादि २ सब शास्त्र पदार्थ ज्ञान के अधीन हैं जब तक आप को पूर्णरीति से पदार्थों का परिचय नहीं होता तबतक न लौकिक और न परलौकिक ही कार्य यथाविधि निष्पन्न होंगे। बात बात में आप ठगे जायंगे। वैदिक यज्ञ

काल में कुछ उत्तर प्रत्युत्तर होते हैं उनके पदार्थज्ञान न होने से वैदिक यज्ञ ही व्यर्थ है जैसे—

को अस्य वेद भुवनस्य नाभिं को द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षम्। कः सूर्यस्य वेद बृहतो जनित्रं को वेद चन्द्रमसं यतोजाः। यजुर्वेद। २३। ५९

(अस्य भुवनस्य नाभिं कः वेद) इस संसार के नाभि अर्थात् बन्धनस्थान आदिकारण और परस्पराश्रयाश्रयिभाव को कौन जानता है? (द्यावापृथिवी अन्तरिक्षम्) द्युलोक, पृथिवी लोक और अन्तरिक्ष लोक इन तीनों लोकों को कौन जानता है? (बृहतः सूर्यस्य जनित्रं कः वेद) इस महान् सूर्य के जन्म को कौन जानता है? (यतो जः चन्द्रमसं कः वेद) जहां से चन्द्र उत्पन्न होता है अर्थात् शुक्लपक्ष में बढ़ता और कृष्णपक्ष में घटता कैसे है इसको कौन जानता? यहां चार प्रश्न हैं। इनके समाधान में कहा जाता है कि मैं जानता हूं। अब आप बतावें कि कोई मूर्ख या किंचित् पढ़ा हुआ अथवा एक २ शास्त्र का ज्ञाता कभी भी इन चारों का यथाविधि यथोचित समाधान कर सकताहै? मैं छोटे से अन्तिम प्रश्न पर विचार करता हूं तो सारे सम्प्रदायी पुस्तकों में इसका समाधान अशुद्ध पाता हूं। चन्द्रमा क्यों घटता क्यों बढ़ता। उसकी उत्पत्ति कैसे हुई इस पर नाना विप्रतिपत्तियां (परस्पर विरुद्ध बचन) देखता हूं। कोई कहता है कि छः दिनों में ही यह सम्पूर्ण विश्व बन गया कोई कहता है कि समुद्र से या अत्रि की दृष्टि से चन्द्र उत्पन्न हुआ है। देवता और पितर दोनों दल बराबारी

चन्द्रस्थ अमृत पीते हैं इस हेतु यह घटता बढ़ता रहता है। कहिये यही चन्द्रोत्पत्ति का ज्ञान है? प्यारे मित्रो! इस प्रश्न के उत्तर के लिये क्या २ जानना चाहिये। शास्त्र पढ़कर देखो अतः तुम यदि वेदों की रक्षा करना चाहते हो तो पहले पदार्थ विज्ञान सम्बन्धी शास्त्रों को अच्छे प्रकार पढ़ो। उन चारों प्रश्नों का उत्तर इस प्रकार दिया जाता है—

वेदाहमस्य भुवनस्य नाभिं वेद द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षम्। वेद सूर्यस्य बृहतो जनित्रमथो वेद चन्द्रमसं यतोजाः। यजुः २३। ६०।

१—मैं इस संसार के नाभि को जानता हूं। २—मैं द्यावा-पृथिवी और अन्तरीक्ष को जानता हूं। ३—मैं महान् सूर्य का जन्म जानता हूं ४—मैं चन्द्रमा को जानता हूं जहां से वह उत्पन्न होता है। वेद भगवान् का यह उत्तर जतला रहा है कि ऐ मनुष्यो! प्रथम तुम पदार्थतत्त्ववित् बनो तब वैदिक कर्मों में प्रवृत्त होवो। इसी प्रकार नैयायिक तर्क क्या करेंगे जब उन्हें पदार्थ ज्ञान ही पूरा २ नहीं है। पदार्थ ज्ञान के ऊपर ही तर्क भी आश्रित हैं। मानलो कि कोई कहता है कि पृथिवी तीक्ष्ण वेग से लट्टू के समान घूम रही है। अब इसपर नैयायिक यदि कहें कि नहीं। आंख से पृथिवी को घूमती हुई नहीं देखते अतः आपका कथन मिथ्या है तो क्या नैयायिक का इतना कहना पर्याप्त होगा? नैयायिकों के उस कथन को वैज्ञानिक पुरुष अति तुच्छ दृष्टि से देखेंगे और जैसे बालक के बचन पर विद्वान् हंसता है वैसेही हंस देवेंगे। इसी प्रकार आजकल के वैशेषिक और नैया-

यिक मिलकर कहें कि वायु और जल अमिश्रिततत्त्व हैं तो क्या वैज्ञानिक इन के शिर को सावित रहने देंगे? मुख्यतया आक्सीज़न और नैट्रोज़न इन दो वाष्पीय पदार्थों से वायु बना हुआ है और आक्सीजन और हैड्रोजन इन दो पदार्थों के रासायनिक संयोग से जल बनता है। इसी प्रकार भारत भूषण प्रातः स्मरणीय श्री भास्कराचार्य सिद्धान्तशिरोमणि प्रभृतिग्रन्थ विरचयिता यदि जीते रहते तो पृथिवी अचला है स्वशक्ति से आकाश में स्थिर है और सूर्य इसकी परिक्रमा करता है ऐसे कहते हुए श्री भास्कराचार्य जी के आगे मोटे २ लम्बे २ लट्ठ ले २ कर वैज्ञानिकपुरुष खड़े हो जाते। किमधिकम्। प्यारे आलस्य त्यागो पदार्थ ज्ञान की ओर आओ। पदार्थज्ञान विज्ञान के ही गुलाम समस्त शास्त्र हैं। हां मैं यह अवश्य जानता हूं कि पुराणों ने आप की बुद्धि के ऊपर ऐसा अटूट ताला लगा दिया है। उस कोठरी का खुलना दुष्कर हो गया है। कुछ चिन्ता नहीं यह शास्त्र तीक्ष्ण महान् चुम्बक लोहा है। अथवा इसके निकट सब तरह की कुञ्जियां हैं यदि तुम चाहोगे तो वह ताला खुल जायगा।

॥ इति जिज्ञास्याध्यायः ॥

॥ वेद–जिज्ञास्याध्याय ३ ॥

पूर्व उदाहरणों से विदित है कि वैदिक समय के ऋषिगण बहुत ही तलाश में लगे हुए थे। ऋषियों के अनुगामी पुरुषों

को उचित है कि उनके पथ पर चलें। वे नर पशु हैं जिनका मन प्राकृत घटनाओं से प्रेरित हो खोज में नहीं लगता है। अथवा उस २ विद्या के ज्ञाता के समीप जाके नहीं पूछते हैं। भूकम्प, सूर्यचन्द्र का उपराग, चन्द्र का घटना बढ़ना, इन्द्रधनुष, ववण्डर, पूर्वीय पश्चिमीय वायु और समुद्र का ज्वारभाटा आदि शतशः घटनाएं प्रतिदिन, प्रतिमास प्रतिवर्ष होती ही रहती है। इनके सत्य कारण जानने के लिये जो प्रयत्न नहीं करता है वह जगत् में अजागलस्तनवत् व्यर्थ है। यदि कहैं कि ये सब अति तुच्छ बातें हैं। पुराणों में इन सब का उत्तर एक २ श्लोक में देके झंझट तैकर दिया गया है अब हम इन में क्या तलाशी करें। जिस के सहस्र फणों पर पृथिवी पुष्पवत् स्थापित है वह जब २ करवट लेना चाहता अथवा जब कभी देह सुग बुगाता तबही भूकम्प होता, इस में कौनसी विशेषता, और आश्चर्य-प्रदवात है जिसकी जिज्ञासा में अपना समय व्यर्थ वितावें। राहु की सूर्य चन्द्र से शत्रुता होगई है वह कभी २ बदलालेने के हेतु उनपर धावा करता हैं। यही ग्रहण है। देवता और पितर वारी २ चन्द्रस्थ अमृत पियाकरते हैं अतः वह घटता बढ़ता है वलिके मारने के लिये इन्द्र अपना धनुष तैयार करता। भूत प्रेतों को जव कभी यात्रा करनी होती है तो वात्या अर्थात् ववण्डर पैदा होता है। देवता जब सभा करने को बैठते हैं तब सूर्य और चन्द्र की चारों तरफ परिधि=गोलचक्र बनजाता है वहां बैठकर देवगण विचार करते हैं। समुद्र का पुत्र चन्द्रमा है। अपने पुत्र से मिलने के हेतु समुद्र बढ़ता है। इत्यादि सहस्रशः

बातों का समाधान ऐसा बुझा २ कर पूर्ण करते हैं कि एक छोटा बच्चा भी समझ जाता है तब ऐसी २ प्राकृत घटनाओं के विचार में केवल बालक और बालिश जिन्हे कोई काम नहीं, भले ही पड़े रहें । ईश्वर का भजन करना ही मनुष्य जीवन का परम उद्देश व पुरुषार्थ है । परमार्थ की बात कीजिये । माया की बातें क्यों जगत् मे फैलाते हो । इस में क्या धरा है । लोग नास्तिक हैं ही इस से अधिक घोर क्रूर हिंसक वन के क्षयकारी होजायंगे । समाधान । श्रद्धालु विश्वासी जनो ? आपने जो कहा है वह आपका दोष नहीं ऐसे ही कुल और समाज में आपका जन्म हुआ है कि ऊपर की ओर दृष्टि नहीं जायगी । रेणुकण ऊर्ध्व जा के भी नीचे ही गिरता है । शुक जैसे काक नहीं पढ़ता । भारतवासी इस समय विपरीत दिशाको जा रहे हैं न जाने किस अन्धकारमय कोठरी में ये गिरेंगे । सोचिये । आपने पुराणों पर विश्वास करलिया तब तो बातुल जैसे बकते हैं । स्वयं भी कभी भृगु जैसे तपकर इन घटनाओं की परीक्षा की है(१) डार्विन जैसे कभी दो चार दिन भी इसके लिये सर्फ किए हैं (२) ऋषि भरद्वाज जैसे एक जीवन भी इस महान् कार्य में परायण हुए हैं । जो जन–समुदाय किसी एक के पीछे चल पड़ता है उस का अधः पतन बायवलीय आदम सा (४) पौराणिक नहुष सा (५) अथवा नियागरा जलप्रताप सा अथवा रात्रि का ज्योतिष का सा होता है । पुराणों के ही पीछे मत चलिये । पृथिवी पर और भी तो कोहनूर जैसे वहु मूल्य शास्त्र हैं और आप के अभ्यन्तर

नोट-१ ऋषि भगुजी पांचवार अपन पिता के निकट ब्रह्म विद्या की शिक्षा

में भी तो विवेक रेडियम स्थापित है इस के द्वारा भी देखा कीजिये ६।

विश्वासियो ! जब प्रत्यक्ष पदार्थों का ज्ञान ठीक से पुराणों में वर्णित नहीं है तब अज्ञेय, समाधिगम्य परमात्मा का निरूपण उनमें तथ्यही है हम कैसे कह सकते हैं । देखिये ! पुराण कहते हैं कि यह गंगा स्वर्ग से गिरती है किन्तु अब लाखों विज्ञ देख आए हैं कि वह हिमालय के एक झील से बहके निकलती है । वहां ऊपर से इसको गिरती हुई कोई नहीं देखता । फिर

ले २ कर मनन करते रहे ।२—डार्विनसाहब ने मनुष्य का विकाश पृथिवी पर कैसे हुआ इस के खोज में पृथिवी पर के प्राय: चारों प्रकार के जीवों की पूरी तलाशी लेली और इसी में अपना सम्पूर्ण जीवन बितादिया ।—३ भरद्वाज जब परम वृद्ध हो गए तब इन्द्र आके बोले कि ऋषे यदि मैं आप को एक शतायु और दूं तो आप उस से क्या करेंगे । भरद्वाज ने कहा कि विद्याही खोजता रहूंगा । इन्द्र वर देके चले गए और वह पुन: विद्या खोजने लगे । इस प्रकार भरद्वज को तीन शतायु और भी दीये गए वह विद्या ही खोजते रहे । अन्त में आके इन्द्र ने कहा" अनन्तावै वेदा:" वेद अर्थात् विद्याएं अनन्त हैं कहांतक आप ढूंढेंगे । बहुत प्रशंसनीय जीवन आपका बीता है । अब मुक्ति धाम चलिये । यह आलङ्कारिक कथा है । ऋषियों के परम परिश्रम दिखलाने के लिये अतिशयोक्ति और मनुष्य प्रवृत्यर्थ रोचक है । ४—बायबल में कथा आती है कि एक शैतान के बहकाने से आदम ने निषिद्ध फल खाया इस अपराध के लिये वह स्वर्ग से गिरा दिया गया । ५-इन्द्राणी के फन्दे में पड़के राजा नहुष, स्वर्ग से गिर गया और अजगर सांप होगया ये दोनों ही काल्पनिक कथाएं हैं !६— किसी २ रात्रि को आकाश से बहुत सी ज्योतियां गिरती हुई दीखती हैं । इसे कोई तारा टूटना कहते हैं । वास्तव में वह वायु है किसी कारणवश अग्निवत् जल उठता और गिरता हुआ प्रतीत होता है ।

क्योंकर ऐसी बात पर विश्वास करें । यदि कोई भी सिद्ध पौराणिक भागीरथी को रुद्रकी जटा से वा विष्णु के पैर से निकलती हुई दर्शन करवाते तो सबही इसको कबूल करही लेवेंगे । इन्कार करने की कोई भी गुंजाइश न रहेगी । दूसरे कहते हैं कि मगध की कर्मनाशा नदी के ऊपर लटकेहुए त्रिशंकु के मुह से लार गिरता रहता है अतः उस में नहाना पाप है । यहां बिचार ने की बात है मेघ से गिरते हुए पानी को लोग बराबर देखा करते हैं तब वैसा ही त्रिशंकु का लार गिरता हुआ क्यों नहीं दीखता यदि वह नहीं दीखता तब कर्मनाशा का जल भी न दीख पड़े । शैव कहते हैं कि काशी त्रिशूल पर स्थापित स्वर्णमयी है। इसीहेतु अभीतक मैथिल ब्राह्मण वहां से मिट्टी वा मिट्टी के वर्तन नहीं लाते क्योंकि वहां की मिट्टी सोना है उतना दाम दे नहीं सकते । किन्तु भूगर्भ विद्या के अध्ययन से जाना जाता है कि यह सारी बातें मिथ्या हैं । यदि वहां कुछ भी विश्वनाथका प्रताप होता तब औरंगज़ेब इनका मन्दिर तुड़वा मसजिद ही कैसे बनाते ? पौराणिक चिरंजीवी मार्कण्डेय वलि, व्यास महावीर, विभीषण कहां हैं ! किस पर्वत पर परशु-राम तपकर रहे हैं । उनका वह २१ बार क्षत्रियों को अन्त करने हारा बल कहां है ? प्यारे ! ये सब गप्प हैं । तुम कहते हो कि अभी तक लंकाद्वीप में राक्षसों के साथ विभीषण राज्य कर रहे हैं । अंगरेजों का राज्य वहां नहीं है । भला सोचो तो अयोध्या में अंगरेज राज्य करते हैं या नहीं ? जब रावणान्तक राम राज्य में ये विराजमान हैं तब रावण राज्य में इनके राज्य

का होना असंभव कैसे ? पुराण कहता है कि मुंगेर के एक कुण्ड में जो गरम जल निकलता है उसका कारण वहां सीताजी का स्नान है। परन्तु यदि वैसा होता तब वहां ही खोदकर अंगरेज कैसे गरम जल निकाल इसको मिथ्या सिद्ध करते । तुम ३३ तैंतीस कोटि देवता पूजते हो। कभी अपने आंखो से किसी देवता को देखा नहीं विचारशील पुरुषो ! इन मद्योन्मत्त कथाओं में पड़कर अपना अप्राप्य जीवन मत जानेदो। आजकल विज्ञान का समय है यदि इसमें पीछे रहजाओगे तो तुम्हारा कहीं भी पता नहीं लगेगा। सोनपुर के कार्तिकी मेले में जैसे अबोध बालक भूलजाते हैं ऐसे तुम भी मनुष्य समाजों से कहीं पृथक् हो जाओगे । पुराणों की बातें मत किया करो वे बायबल के शैतान के समान हैं।

जैसे निरपराधी समुद्र के उत्तरतटवासियों को रामके बाणने शोषलिया। विष्णु के चक्र ने दुर्वासा को पतित कर ही छोड़ा वैसाही पुराण आर्यावर्त को निगले बिना न छोड़ेगा, पुराणमहाऽजगर इस भारत बिहग के समीप पहुंच गया है अब निगलने की थोड़े ही देरी है । भाइयो ! यदि इस अजगर से अब भी बचना चाहते हो तो विज्ञान की शरण में भाग आओ। त्राण की अब भी आशा है जयपुर के रामनिवास बाग के फूल, कलकत्ते के अजायबघर के मृत शरीर पंजर ! जियालोजिकलगार्डन के समस्त प्राणी, जापान की रंगबिरंगी मछलियां आफ्रिका के विचित्र पक्षी आपके मनको अपनीओर आकर्षण नहीं करते पृथिवी पर घूम २ कर देखो ! चकित होजाओगे। मैं कहांतक लिखूं, यदि आपको वेदों, शास्त्रों,

तथा अन्यान्य धर्म पुस्तकों में विश्वास है तो उन्ही ग्रन्थों से कुछ बातें दिखाता हूं कि वे किस २ वस्तु के वर्णन करने से इतने महत्व को पाए हुए हैं । पूर्व में वेदों के अनेक उदाहरण दिखला चुका हूं कि परमात्मा से प्रेरित होकर ऋषिगण कैसी २ बातों की जिज्ञासा करते हैं । ऐ मेरे श्रावको ? सुनो ? वे महर्षि इनही अग्नि, वायु, मेघ, विद्युत्, सूर्य, पृथिवी, जल, वृक्ष, वनस्पति, प्रातःकाल, पूर्णिमा, अमावस्या, घोड़े, हाथी, जलचर, थलचर, नभचर, आदिकों के ही तो वर्णन करते हैं । परमात्मा की विभूतियों से वे ऋषिगण इतने मोहित हुए कि सुध बुध भूलकर इनके ही वर्णन करते ठककमागए । मैं दो चार बातें प्रथम यजुर्वेद की कहता हूं ।

यजुर्वेद—प्राणायस्वाहा । अपानायस्वाहा । व्यानायस्वाहा । चक्षुषेस्वाहा । श्रोत्रायस्वाहा । वाचेस्वाहा । मनसेस्वाहा । यजुः २२ । २३

यहांपर प्राण, अपान, व्यान, चक्षु, श्रोत्र, वाक्, और मन के लिये स्वाहा कहा गया है । परन्तु ये प्राण अपानादि कौन वस्तु हैं यह आप यदि न जानेंगे तो इस से कौनसा फल प्राप्त करेंगे पुनः—

प्राच्यैदिशेस्वाहा । अर्वाच्यैदिशेस्वाहा । दक्षिणायैदिशेस्वाहा । अर्वाच्यैदिशेस्वाहा । प्रतीच्यैदिशेस्वाहा । अर्वाच्यैदिशेस्वाहा । उदीच्यैदिशेस्वाहा । अर्वाच्यैदिशेस्वाहा । ऊर्ध्वायैदिशेस्वाहा ।

अर्वाच्यै दिशे स्वाहा । अर्वाच्यै दिशे स्वाहा । अर्वाच्यै दिशे स्वाहा । यजुः । २२ । २४ ।

यहां सब दिशाओं और विदिशाओं के नाम पाए जाते हैं । प्राची=पूर्वदिशा । दक्षिणादिशा । प्रतीची=पश्चिमदिशा । उदीची=उत्तरदिशा ऊर्ध्वा=ऊपर की दिशा और अवाची=नीचे की दिशा और इन दिशों की बीचली दिशाएं जो अर्वाची कहाती हैं इन सब के लिये स्वाहा । ज्ञानी पुरुषो ? इनही वस्तुयों का वैशेषिक और आज कल के बड़े २ विद्वान् बड़ी बुद्धिमत्ता के साथ निरूपण कर रहे हैं । सोचिए तो पूर्व पश्चिम दिशा कहां से और कौन वस्तु हैं । इनका कहां अंत है । ऐसे ख्यालात क्योंकर उत्पन्न होते हैं । क्या इसके पता लगाने केलिये आपको प्रयत्न नहीं करना चाहिये ! पुनः—

अद्भ्यः स्वाहा । वार्भ्यः स्वाहा । उदकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा । स्रवन्तीभ्यः स्वाहा । स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा । कूप्याभ्यः स्वाहा । सूद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः स्वाहा । अर्णवाय स्वाहा । समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा । २२ । २५ ।

यहां सब प्रकार के जलों के नाम पाए जाते हैं । आप् वार और उदक ये तीनों नाम तीन प्रकार के जलों के हैं । तिष्ठन्ती = नदियां वा समुद्रादिकों के जल जो खड़े हैं । स्रवन्ती=किसी पर्वत के वा पृथिवी के छिद्र से जो जल स्रवित हो रहा है । स्पन्दमाना=जो धीरे २ बहरहा है । कूप्या = कूएं का जल ।

सूद्या = खाते का जल । धार्य्या = गृह में वा कहीं जमा किया हुआ जल । अर्णव और समुद्र ये दोनों नाम सागर के हैं ।

एकही कण्डिका में सब प्रकार के जलों के नाम आगए हैं । कहिये आजकल के वैज्ञानिक पुरुष इनहीं जलों के तो तत्त्वावधान कर रहे हैं जल क्या वस्तु है । क्या आप जानते हैं । नैयायिक, वैशेषिक, और सांख्य इसको कौन वस्तु ठहराते और आज कल के वैज्ञानिक क्या कहते हैं । इनके भिन्न २ सिद्धान्त तो पढ़िये । जैसे पिपासित मृग जलकी ओर दौड़ता है वैसे ही इस विद्या की ओर दौड़िये । आप समुद्र से डरते हैं क्योंकि समुद्र आपसे बहुत दूर है । प्रति साल कई लक्ष नरनारियां समुद्र को देखे बिना ही मरजाते हैं । भारतवर्ष के मरुदेश निवासी प्रायः नदियों का भी दर्शन नहीं करने पाते हैं । कालाम्बस वास्कोडेगामा और मजिल्लां के समान सामुद्रिक यात्रा करके परमात्मा की आश्चर्य विभूतियां देखो । पुनः—

वाताय स्वाहा । धूमाय स्वाहा । अभ्राय स्वाहा । मेघाय स्वाहा । विद्योतमानाय स्वाहा । स्तनयते स्वाहा । अवस्फूर्जते स्वाहा । वर्षते स्वाहा । अववर्षते स्वाहा । उग्रं वर्षते स्वाहा । शीघ्रं वर्षते स्वाहा उद्गृह्णते स्वाहा । उद्गृहीताय स्वाहा । प्रुष्णते-स्वाहा । शीकायते स्वाहा । प्रुष्वाभ्यः स्वाहा । ह्रादुनीभ्यः स्वाहा । नीहाराय स्वाहा । यजुः २२ । २६

यहां सब प्रकार के मेघों का वर्णन है । मेघ कैसे बनता है इसकी कौन २ दशाएं होती हैं यहां इनके नाम देखते हैं ।

सूर्य की गरमी की सहायता से वायु पानी को ऊपर चढ़ाता है। फिर वह धूमसा दीखता है। फिर मेघ अर्थात् वरसने सा हो जाता है तब उसमें विद्युत गर्जन, वर्षण किञ्चित् वर्षण, अधिक वर्षण आदि व्यापार होने लगते हैं पीछे छोटे २ बूंद होके समाप्त होने लगता है। पुनः इसी जलका एक भेद कभी २ जाड़े के महीने में कुहेसा दीखता है। इसको वेद में नीहार कहते हैं।

चिन्तकजनो ! क्या तुम समझते हो कि कैसे समुद्र से वा पृथिवी से जल उठके मेघ बन पृथिवी को पुनः२ सिक्त करता रहता है। कभी २ मेघ से पानी के छोटे २ पत्थर क्यों-कर गिरते हैं। ये उपल कैसे बनते हैं ? फालगुन, चैत्र, वैशाख में कभी भयंकर रूपसे जलीय पत्थर गिरते हैं जिस से किसानों को बड़ी हानि पहुंचती है। क्या इसका कारण है। कुहेसा क्या पदार्थ और कैसे बनता है, क्या मेघ की दौड़ती हुई काली घटा आप के मन को मोहित नहीं करती। इसके चरित्रों से परिचित होना क्या आप नहीं चाहते। यदि चाहते हैं तो पदार्थ विद्याको ध्यान से पढ़िये। कैसी २ आश्चर्य विभूतियां दीख पड़ेंगी। पुन—

नक्षत्रेभ्यःस्वाहा। नक्षत्रियेभ्यःस्वाहा। अहो-रात्रेभ्यःस्वाहा। अर्द्धमासेभ्यःस्वाहा। ऋतुभ्यः-स्वाहा। आर्तवेभ्यःस्वाहा। संवत्सरायस्वाहा। द्या-वापृथिवीभ्यां स्वाहा। चन्द्राय स्वाहा। सूर्याय-स्वाहा। रश्मिभ्यःस्वाहा। वसुभ्यःस्वाहा। रुद्रे-

भ्यःस्वाहा । आदित्येभ्यःस्वाहा । मरुद्भ्यःस्वाहा विश्वेभ्योदेवेभ्यः स्वाहा । मूलेभ्यःस्वाहा । शाखा-भ्यःस्वाहा । वनस्पतिभ्यःस्वाहा । पुष्पेभ्यःस्वाहा । फलेभ्यः स्वाहा । ओषधीभ्यःस्वाहा । यजुः २२।२८

यहां नक्षत्र से लेके ओषधि पर्यन्त के नाम हैं । रात्रि में नक्षत्र क्यों दीखते । वे संख्या में कितने और कितनी दूर हैं । इनको कौन गिन सकेगा किन्तु आजकल बड़े २ दूरबीन बनाए गए हैं जिनके द्वारा इनके बारे में बहुत कुछ जान सकते हैं । शुक्ल और कृष्णपक्ष क्यों होते । सूर्य और चन्द्र कहां उदय अस्त लेते हैं । चन्द्र तो दिन में भी दृश्य होता परन्तु सूर्य रात्रि को कहां चला जाता । फिर वायु जल गरमी और प्रकाश की सहायता से कैसे मूल, शाखा वनस्पति, पुष्प, फल, और विविध औषधियां उत्पन्न होती हैं । इनके क्या २ स्वभाव हैं । प्यारे ! इस एक कण्डिका के तत्त्वजानने के हेतु अनेक विद्याओं की ज़रूरत है । ज्योतिष शास्त्र, वनस्पति शास्त्र, भौतिक शास्त्र प्रभृति विद्याओं को जाने विना इनका भेद कैसे भासित होगा । पुनः—

वसन्ताय कपिञ्जलानालभते । ग्रीष्माय कलविङ्कान् वर्षाभ्यस्तित्तिरीन्, शरदेवर्त्तिका हेम-न्ताय ककरान्शिशिराय विककरान् यजु० ।२४।२०

यहां बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर इन छवों ऋतुओं के नाम हैं । पुनः यहां एक और भी बड़ी विल-

क्षणता और विद्या की ओर लेजानेवाली वार्ता देखते हैं। वसन्त ऋतुके लिये कपिञ्जल = पौंडूकी या कबूतर। ग्रीष्मार्थ कलविंक = चरकपक्षी। वर्षा के लिये तीतर। शरद के लिये बटेर। हेमन्त के लिये ककरनाम के पक्षी। और शिशिर के लिये विककरनाम के पक्षियों को प्राप्त करें। जब तक ऋतु विद्या और पक्षी विद्या का वास्तविकतत्व न जानेगा तब तक इसका भेद कैसे मालूम होगा। वसन्त और कपिञ्जल से क्या सम्बन्ध है? इन पक्षियों का क्या २ स्वभाव है यह सब अवश्य ज्ञातव्य है।

समुद्राय शिशुमारानालभते। पर्जन्याय मण्डूकान्। अद्भ्योमत्स्यान् मित्राय कुलीपयान्। वरुणाय नाक्रान्। २१ सोमाय हंसानालभते। वायवेबलाका इन्द्राग्निभ्यां क्रुञ्चान्। मित्राय मद्गून्। वरुणाय चक्रवाकान्। २२ अग्नये कुटरूनालभते। वनस्पतिभ्य उलूकान्। अग्नीषोमाभ्यां चाषान्। अश्विभ्यां मयूरान् मित्रावरुणाभ्यां कपोतान्। २३॥ इत्यादि।

यजुर्वेद के इस चौबीसवें अध्याय के अन्त तक बहुत से जलचर, स्थलचर, नभश्चर प्राणियों के नाम आए हैं। पता सहित उन के नाम यहां लिखदेते हैं विचार कीजिये! जहां तक होगा भाषार्थ कर दिया जाता परन्तु इन वैदिक नामों को भी तो स्मरण रखिये।

देवता के नाम		प्राणियों के नाम	पता
			(२१)
समुद्र के लिये	...	शिशुमार = जलजन्तु जो अपने बच्चों को भी मारके खाजाय।	
पर्जन्य,,	...	मण्डूक = मढ़क, मेढुक	
जल ,,	...	मत्स्य = मछली	
मित्र ,,	...	कुलीपय = केंकरा	
वरुण,,	...	नाक्र = मगर	
सोम,,	...	हंस = हंस	
			(२२)
वायु,,	...	बलाका = बगुली	
इन्द्राग्नि	...	क्रुच = सारस	
मित्र,,	...	मद्गु = शुतुरमुर्ग	
वरुण,,	...	चक्रवाक = चकवा, चकई	
अग्नि,,	...	कुटरु = मुर्ग	(२३)
वनस्पति,,	...	उलूक = उल्लू	
अग्नीषोम,,	...	चाष = नील कण्ठ	
अश्वी ,,	...	मयूर = मोर	
मित्रा वरुण,,	...	कपोत = कबूतर	
सोम,,	...	लब = बटेर	(२४)
त्वष्टा,,	...	कौलीक = कौलीक नाम का पक्षी	
देवपत्नी,,	...	गोषादी = गौवोंपर बैठनेहारे पक्षी	
देवजामि,,	...	कुलीक =	

देवता के नाम		प्राणियों के नाम		पता
अग्नि,,	...	पारुष्ण	=	
दिन,,	...	पारावत	=	पेंडकी, कबूतर (२५)
रात्रि,,	...	सीचापू	=	
अहोरात्रसन्धि	...	जतु	=	
मास,,	...	दात्यौ	=	काले कौआ
संवत्सर	...	सुपर्ण	=	सुन्दरपांखवालापक्षी
भूमि,,	...	आखु	=	चूहा (२६)
अन्तरिक्ष,,	...	पाङ्क्त	=	जो पंक्तिबांधकरचले
द्युलोक,,	...	कश	=	
दिशा,,	...	नकुल	=	नेउला
अवान्तर दिशा	...	बभ्रुक	=	भूरा नेउला
वसु,,	...	ऋश्य	=	ऋश्यजातिकाहरिण (२७)
रुद्र,,	...	रुरु	=	मृगविशेष
आदित्य,,	...	न्यङ्कु	=	,,
विश्वेदेव,,	...	पृषत	=	,,
साध्य ,,	...	कुलुङ्ग	=	,,
ईशान ,,	...	परस्वान	=	,, (२८)
मित्र ,,	...	गौर	=	मृग
वरुण ,,	...	महिष	=	भैंस
बृहस्पति,,	...	गवय	=	नीलगाय
त्वष्टा ,,	...	उष्ट्र	=	ऊंट

देवता के नाम		प्राणियों के नाम		पता
प्रजापति	..	पुरुषारथी	=	(२१)
वाग्,,	...	प्लुषि	=	मच्छर
चक्षु,,	...	मशक	=	मच्छर
श्रोत्र,,	.	भृङ्ग	=	भौंरा

अब आगे केवल पशु पक्षियों के नाम लिखे देता हूं।

गोमृग=	कुलुङ्ग=पक्षी
मेप=मेढ़ा	अज=बकरा
मर्कट=वानर	शुक=
रोहित्‌पि=लालमृग	क्रोष्टा=सियार
वर्त्तिका=बत्तक	पिद्व=मृग
नीलङ्गो=	ककट=
मयु=किन्नर	सागर=पपीहा
उल=छोटा कीड़ा	सृजय:=
हालक्ष्ण=सिंहविशेष	शपाण्डक
धुपदंश=विलार	शारी=मुर्गी
कंक=उजजीचीरह	श्वावित्=सेही
बक=बगुला	शार्दूल=केशरी सिंह
धुक्ष=कौआ	वृक=भेड़िया
कलविङ्क=चिपैरा	पृदाकू=सांप
लोहिताहि=लालसांप	शुक=मुर्गा
पुष्करसादी=तालावमेंरहनेहारा	अति =

वाहस = अजगर
दार्विद = काठफोड़नेहारापक्षी
अजल =
पैङ्गराज =
प्लव =
कूर्म = कछुआ
पुरुष } =
मृग
गोधा =
कालका =
दार्वाघाट = कठकोखा
कृकवाकु = मुर्गा
मकर = मगर
शल्पक = सोही । साही
एणी = हरिण
मूषिक = चूहा
लोपाश =
ऋक्ष = रीच्छ
जतू =
क्षुपिलीक =
जहका =
अन्यवाप = कोकिल
उद्र = जलचर गिंगचा ।

कश्यक = कछुआ
कुण्डूणाची =
गोलत्तिका =
वर्षाभू = मेडुकी
कश =
मान्थल =
अजगर =
शश = खरहा
सृणीवान् =
वार्धीनस = कण्ठ में थन वाला बकरा
सृमर = नीलगाय
कूपि =
पिक = कोकिल
खड्ग = गैंड़ा
श्वा = कुत्ता
गर्दभ = गदहा
तरक्षु=व्याघ्र
शूकर=सूअर
सिंह = सिंह
कृकलास = गिरगट
पिप्पका =

इस २४ वें अध्याय में नाना प्रकार के पशु पक्षियों के नाम कहेगए हैं । इन सबों का यज्ञ में प्रयोजन होता है ।

षट् शतानि नियुज्यन्ते पशूनां मध्यमेऽहनि अश्वमेधस्य यज्ञस्य नवभिश्चाधिकानिच ।

प्रतिदिन तीन सवन—प्रातः सवन, माध्यन्दिन सवन, और तृतीय सवन होते हैं । इन में से जब माध्यन्दिन होने लगता है तब ६०० और ६ प्रकार के पशुओं की प्रदर्शनी होती है । ग्राम २ नगर २ से यज्ञदर्शनार्थ लोक आते हैं उनके मनोविनोदार्थ और इन पशुओं पक्षियों तथा ओषधि आदिकों के स्वभाव गुण आदि से सब कोई परिचित होवें और इनको यथायोग्य काम में लावें या त्यागें इस कारण यज्ञ में सब प्रकार के पदार्थ एक स्थान में एकत्रित किये जाते हैं । जो लोग आजकल की कलकत्ते, बम्बई, प्रयाग, लाहोर आदि बड़े २ शहरों की प्रदर्शनी देखा करते हैं । वे समझ सकते हैं कि किसी एक स्थान में इतने पदार्थ सरकार की ओर से क्योंकर इकठे किये जाते हैं । क्यों इसमें इतने व्यय किए जाते हैं । प्राचीनकाल में भी प्रकृतिविमोहित ऋषिगण भी सम्राट्द्वारा ऐसी २ प्रदर्शनी लोकोपकार के लिये करवाया करते थे । आप देखिये उस समय के ऋषिगण कितने उद्योगी और प्रकृति के प्रेमी थे । उन पशुओं में २६० के करीब जंगली पशु होते थे । इनको कैसे जीवित रक्खें इसके लिये मनुधर्म सूत्र में उपाय दिया हुआ है ।

नाड़ीषु प्लुषिमशकान् । करण्डेषु सर्पान् । पञ्जरेषु मृगव्याघ्र सिंहान् । कुम्भेषु मकरमत्स्य

मण्डूकान् । जालेषु पक्षिणः । करासु हस्तिनः नौषु चौदकानि यथार्थमितरानिति ।

नाड़ी = एक प्रकार के तृणों से बनी हुई पेटी उनमें भर कर प्लुषि=छोटी२ चींटी से लेकर मशकपर्यन्त प्राणी रक्खेजांय। करण्ड = एक प्रकार की सापों के रखने के लिये पेटी। इन करण्डों में सांप रक्खें। पींजरे में मृग, व्याघ्र, सिंह आदि। घटों में मकर, मछली और मण्डूक = मेड़क आदि। जलों में पक्षीगण। कराओं में हाथी। नोकाओं पर जलचर जन्तु। अर्थात् जिसतरह से जिसका सुविधा हो उस २ उपाय से उन २ जन्तुओं को यज्ञप्रदर्शनी में अवश्य रक्खें।

जिज्ञासुयो ? विचारो वेदभगवान् और ऋषिगण क्या मदोन्मत्त थे जो इस माया में फंसे हुए थे और राम २ नहीं भजते थे। बात सत्य यह है कि पदार्थज्ञान विना ईश्वर को कोई पहचान नहीं सकता। मूर्ख अज्ञानी भक्त से ईश्वर डरता रहता है। वह अज्ञानीजन, मिथ्या २ कलंक अपने इष्टदेव पर लगाया करता है पुनरपि सुनिये वेदभगवान क्या वतला रहे हैं।

व्रीहयश्च मे। यवाश्च मे। माषाश्च मे। तिलाश्च मे। मुद्गाश्च मे। खल्वाश्च मे। प्रियङ्गवश्च मे। अणवश्च मे। श्यामाकाश्च मे। नीवाराश्च मे। गोधूमाश्च मे। मसूराश्च मे। यज्ञेन कल्पन्ताम्। यजुर्वेद १८। १२

व्रीहि = धान। यव = जौ। माष = उर्द। मुद्ग =

मूंग। खल्व = चने। प्रियङ्गु = कौनी। अणु = चीन। श्यामाक = कोदो। शामा। नीवार=जंगली धान।

यहां सब प्रकार के खाद्य अन्नों के नाम हैं। प्रार्थना की जाती है कि यज्ञ के द्वारा हे परमत्मन्! ये सब पदार्थ मुझे दो। ईश्वर केवल प्रार्थना से नहीं देते किन्तु उन्होंने मनुष्य जाति को इस कार्य के लिये बुद्धि दी है। आजकल कृषि विद्या की भी दिन २ उन्नति हो रही है। अनेक नहरें खोदी गई हैं। तिरहुत के पूसा ग्राम में तथा पंजाब के लायलपुर नगर में तथा अन्यान्य स्थान में कृषि विद्या सिखाने को सरकार ने पाठशालाएं स्थापित की हैं पुनः—

अश्मा च मे। मृत्तिका च मे। गिरयश्च मे। पर्वताश्च मे। सिकताश्च मे। वनस्पतयश्च मे। हिरण्यञ्च मे। अयश्च मे। श्यामञ्च मे। लोहञ्च मे। सीसञ्च मे। त्रपु च मे। यज्ञेन कल्पन्ताम्। यजुर्वेद १८।१३।

अश्मा=पाथर। मृत्तिका= अच्छी मिट्टी। गिरि=छोटे २ पर्वत। पर्वत=बड़े २ हिमालय पहाड़। सिकता=बालू, रेती। वनस्पति = फूल बिना फल देने हारे वृक्ष जैसे कटहल, गूलर वगैरह। हिरण्य=सोना वा चांदी। अयस्=लोह। श्याम=ताम्र, लोह, कांसा। लोह= काला लोह। सीस=सीसा। त्रपु=रांगा।

इस अठारहवें अध्यायको पढ़िये देखिये कितने पदार्थों की प्राप्ति के लिये प्रार्थना है परन्तु ईश्वर मेरा पुत्र होवे। मैं उसके साथ क्रीड़ाकरूं। मैं इस का मानवरूप देखाना

चाहता हूं। मुझे कब मुक्ति मिलेगी। मैं केवल भक्ति चाहता हूं और कुछ नहीं इत्यादि ऐसी२ प्रार्थना वेदों में कहीं भी नहीं है। अब आगे मन्त्र न देके सिर्फ़ अनुवाद लिखदेता हूं। इन पर विचारिये और इन के तत्वावधान के लिये सिकन्दरिया के राजा टालेमी (१) जैसे अजायब ख़ाना स्थापित कीजिये।

यजुर्वेद १७। २ में निम्न लिखित संख्याओं के नाम आते हैं और प्रार्थना है कि इतनी ईंटों का कुण्ड बनाने की शक्ति दो।

एक = १
दश = १०
शत = १००
सहस्र = १०००
अयुत = १००००
नियुत = १०००००
प्रयुत = १००००००
अर्बुद = १०००००००
न्यर्बुद = १०००००००००
समुद्र = १००००००००००
मध्य = १०००००००००००
अन्त = १००००००००००००
परार्ध = १०००००००००००००

नोट—१-सिकन्दर आज़म का यह एक सेनापति था। बल्कि इसको सिकन्दर का भाई समझना चाहिये क्योंकि सिकन्दर के पिता फिलिप की दासी "आरसिनो" से इस की उत्पत्ति हुई है। सिकन्दर के बाबलन नगर में मृत्यु के पश्चात् मिस्र देश में टालेमी ने अपना एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया, यह योग्य विद्वान् था। विद्या प्रचारार्थ इस ने सिकन्दरिया नगर में एक विशाल अजायब घर बनवाया।

गणित के लिये संख्याओं की आवश्यकता होती है। पुनः गणित की ओर प्रवृत्ति के लिये दो प्रकार से संख्याएं कहते हैं। १। ३। ५। ७। ९। ११। १३। १५। १७। १९। २१। २३। २५। २७। २९। ३१। ३३। यजुर्वेद १८। २४। दूसरा-४। ८। १२। १६। २०। २४। २८। ३२। ३६। ४०। ४४। ४८। यजुर्वेद १८। २५।

प्रधानतया यजुर्वेद यज्ञों का निरूपण करता है। यज्ञ शब्द के मुख्य तीन अर्थ हैं "यज्ञदेवपूजासंगतिकरणदानेषु" १ देवपूजा २ संगतिकरण ३ और दान। पदार्थों को यथायोग्य मिलाने का नाम संगतिकरण है। इस हेतु ऋषिगण जहां तक जिस २ वस्तु को जानते थे इन सब पदार्थों का यज्ञ में संगति अर्थात् संगम = एकत्र किया करते थे अतएव उस समय तक जितने पदार्थ विदित थे प्रायः उन सब का प्रयोग किसी न किसी रूप से यज्ञस्थल में किया करते थे। खेती की सामग्री हल, बैल, कूप, बीज, खनित्र हल का चलाना, बोना, काटना, सींचना आदि। खाने में जो भात, दाल, रोटी, धान, करम्भ-सक्तु, परीवाप, दूध, दही, आमिक्षा, मधु, जल, आसन, पीढ़ी आदि। यज्ञ के स्रुक, चमस, व्यायव्य, द्रोणकलश, ग्रावा, अधिषवण, पूतभृत्, आधवनीय वेदी, कुश इत्यादि और मनुष्यों के जितने भेद हो सकते हैं ये सब यहां इकट्ठे किये जाते थे। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, तस्कर, वीरहा, क्लीव, अयोगू, पुंश्चलू, मागध इत्यादि दो सौ से अधिक नाम ३०

वें अध्याय में आए हैं। मैं कहां तक गिनाऊं। एक कोश ही बनजायगा। स्वयं यजुर्वेद और उसका ब्राह्मण शतपथ पढ़के देखिये। यज्ञ में कितने पदार्थ आयोजित होते थे।

यजुर्वेद में दर्शपौर्णमासेष्टि। अग्निष्टोम। वाजपेय। राजसूय। सौत्रामणि। अश्वमेध। और सर्वमेध आदि यज्ञों का वर्णन आया है। परन्तु किसी में भी ईश्वर प्रयोग नहीं पाया जाता। ईश्वरीय पदार्थों का ही बहुत प्रयोग देखते हैं। इस से विशद्-तया परमात्मा अपनी विभूति जताने के लिये ही प्रेरणा करते हैं यह सूचना होती है। एवमस्तु। इसी प्रकार सम्पूर्ण ऋग्वेद अग्नि, वायु, मेघ, विद्युत्, सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, नदी, पर्वत, समुद्र,, वर्षा, मेंढ़क, कपिञ्जल, पृथिवी, मनुष्य, वाण, आदियों की ही स्तुति से भरा हुआ है। सामवेद इन को ही विशेषरूप से गाते हैं।

वेदों से लेकर तुलसीदास जी के भाषा रामायण तक, ऋग्वेद के आद्य ऋषि मधुच्छन्दा से ऋषि दयानन्द तक, प्रथम कवि वाल्मीकि से विहारी तक, कथा लेखक व्यास से सोमदेव भट्ट तक, इतिहासान्वेषी ग्रीसदेश के हिरेडोटस से वंगवासी रमेशचन्द्र तक, एवं सम्प्रदाय प्रवर्तक इरानी ज़रदुस्त, यहूदी-मूसा, कपिलग्रामनिवासी बुद्धदेव, जेरुजेलम „ प्रदेशविभूषक, ईसामसीह, अरबदेशालंकार मुहम्मद, तथा भारतभूषण शंकराचार्य, रामानुज, वल्लभ माध्व, विष्णु, कबीरदास, नानक साहिब, गुरुगोविन्द, दादूराम, नारायण, राजा राममोहनराय, केशवसेन और नूतन २ विद्याओं के सृष्टिकर्त्ता षट्शास्त्र रचयिता

कपिल, पतञ्जलि, गौतम, कणाद, व्यास, जैमिनि, तथा विदेशी एथेन्स नगर शिरोमणि साक्रेटीज, प्लेटो, अरिष्टोटल, विलायती, गलेलियो, सरआइज़ेकन्यूटन कहां तक मैं नाम गिनाऊं सृष्टि की आदि से अभीतक जितने आचार्य वा ग्रन्थ लेखक हुए हैं। ऐ जिज्ञासु पुरुषो ! वे किन बातों का वर्णन कर गए हैं और कर रहे हैं। कदाचित् आप समझते होंगे कि वे किन्हीं महा महा अति अद्भुत बातें कह गए हैं जो हम लोगों की समझ में न आवेंगी। वे कोई महान् देव थे वा आश्चर्य सिद्ध सिद्धेश्वर योगी थे जो आंखों से प्रत्यक्ष करके सब बातें कहगए हम लोगों में इतनी बुद्धि नहीं कि उनके जानने में समर्थ हों। प्यारे विद्याभिलाषियो ! सुनो वे प्राचीन किन्हीं महा महा अद्भुत् बातों को न लिख गए और न नवीन किन्हीं अज्ञेय बातों को लिख रहे हैं। ऐ शुद्ध हृदय ग्रामीणजनो ? जिन पदार्थों को आप अपनी चारों तरफ प्रति दिन देखते हैं उन्हीं का वर्णन यथामति सब कर गए हैं और अब तक कर रहे हैं आप चारों ओर किन वस्तुओं को देखते हैं कहिये तो। क्या आप रात्रि में जब ऊपर शिर करते हैं तो अनन्त असंख्य आकाश में लटके से हुए नक्षत्र समूहों को नहीं देखते ? जब उससे नीचे आते हैं तब क्या वर्षा ऋतु के मेघ की घटाएं, विजुली, घोरगर्जन और वृष्टि आपको चकित, विस्मित, भीत, आनन्दित नहीं कर देती। कभी मन्द, सुगन्ध, शीतल, कभी तीव्र, दुर्गन्ध, उष्ण और आंधी तूफान, ववण्डर लिए हुए वायु कैसे झोंको से चलता है। पृथिवी पर अग्नि, जल, पशु, पक्षी, तृण, गुल्म, वीरुध, लता

धान्य, औषध, फल मूल कन्द, स्थलचर, जलचर, नभश्चरकीट पतंग कीड़े, मकोड़े इत्यादि सहस्रों पदार्थ देखते हैं। जिसी ओर आप आंख उठावें उसी ओर ईश्वर की विभूतियां दीख पड़ती हैं। इनही का वर्णन सर्वत्र है। ऋग्वेद सब से पहले अग्नि की ही स्तुति करता है। सामवेद प्रथम मन्त्र में अग्नि नाम से ही ब्रह्म का गान करता है। यजुर्वेद आदि काण्डिका में श्रेष्ठ कर्मों में प्रवृत्ति के और पशुओं की रक्षा के लिये प्रार्थना करता है। अथर्ववेद त्रिसप्त अर्थात् उत्तम, मध्यम, और अधम भेद से इक्कीस प्रकार के जो दो आंखें, दो कान, दो नासिकाएं एक मुख हैं उनका ही वर्णन से आरम्भ होता है।

ब्राह्मणग्रन्थ—वेदों के पश्चात् ऐतरेय, शतपथ, ताण्ड्य गोपथ, कृष्णयजुर्वेद, तैत्तिरीय, कौषीतकि आदि शतशः जो ब्राह्मण नाम से ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। और आपस्तम्ब, आश्वलायन, कात्यायन, बौद्धायन सत्याषाढ़ीय वैखानस आदि श्रौत वा गृह्य-सूत्र हैं। वे सबही कर्मकाण्ड का ही वर्णन करते हैं। कदाचित् कर्मकाण्ड शब्द सुनकर आपके मन में अलौकिक भाव की उत्पति हुई हो। नहीं। उन में भी किसी अलौकिक बात का वर्णन नहीं। आप भी कर्म करते हैं स्नान, सन्ध्या, पूजापाठ, होम, बलि, तर्पण आप भी प्रतिदिन अब भी करते हैं। उस सब का ही ढंग रंग से उन ग्रन्थों में वर्णन है। दर्शेष्टि, पूर्णमेष्टि, राज्यसूय, सर्वमेध, अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम, गवामयन, आदित्यानामयन, अंगिरसानामयन, इत्यादि २ विविध यज्ञों का निरूपण उन ग्रन्थों में है। वैदिक यज्ञों का यदि आप अध्ययन

करें तो आश्चर्यान्वित होजायंगे। वह लीला देखते २ उकस जायंगे। ब्राह्मण विहित याज्ञिक समय के पश्चात् उपनिषद् और आरण्यक का समय आता है। उपनिषद् अध्यात्म और वेदान्त शास्त्र कहलाता है परन्तु इन में है क्या? सज्जनो! नयन, कर्ण, श्रोत्र, घ्राण, जिह्वा, मन, चित्त आत्मा इनको ही तो विविध अंगों से ऋषिगण निरूपण करते हैं। परमात्मा से इस जगत् का क्या सम्बन्ध है और वह कैसा है। उस ब्रह्म की प्राप्ति कैसे होसकती है। यह विषय भी वहुधा वर्णित हुए हैं। आरण्यक ग्रन्थ वह कहलाता है जिसको प्राचीन ऋषि मुनि अरण्य= वन में जाके पढ़ते पढ़ाते और विचारते थे। जैसे बृहदारण्यको-पनिषद्। यहां आरण्यक और उपनिषद् दोनों शब्द आए हैं। ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य और बृहदारण्यकोपनिषद् ये दश उपनिषदें परम प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त कौषीतकी, श्वेताश्वतर और मैत्रेयी आदि भी उपनिषदें उपयोगी हैं। ऐतरेयारण्यक, तैत्तिरीयारण्यक आदि आरण्यक ग्रन्थ हैं इन में भी प्रधानतया अध्यात्म वस्तु का ही वर्णन आया है॥

॥ इति वेदजिज्ञास्याध्यायः॥

※ षट्शास्त्रजिज्ञास्याध्याय ४। ※

वैशेषिक, न्याय, सांख्य, योग, मीमांसा, और वेदान्त ये षट्शास्त्र वा षट्दर्शन कहाते हैं। इनके रचयिता क्रमशः कणाद, गौतम, कपिल, पतञ्जलि, जैमिनि, और वादरायण व्यास हैं। वैशेषिक

शास्त्र का सहायक न्याय, और सांख्य का सहायक योगशास्त्र है इस प्रकार चारही शास्त्र कहे जासकते हैं। विषयों के भेद से ये तीन में विभक्त होसकते है। प्रकृतिकारणवाद, परमाणु कारण वाद और ब्रह्मकारणवाद। इस में वैशेषिक और सांख्य शास्त्र स्वतन्त्र और मीमांसा और वेदान्त परतन्त्र हैं। कपिल और कणाद को नूतन विद्यास्थापक कहते हैं। जैमिनि और व्यास ये दोनों किसी नूतन विद्या के आविष्कार कर्त्ता नहीं किन्तु ब्राह्मणों और उपनिषदों के प्रतिपादित अर्थों को निज २ युक्तिरूप फूलों से भूषित करनेहारे हैं। ये छवों शास्त्र जिन २ रूपों से प्रकट हुए थे वे उनके रूप अब नहीं हैं। इन में सांख्य बहुत प्राचीन है परन्तु शोक के साथ कहना पड़ता है कि कपिल प्रणीत ग्रन्थ कोई भी अब उपलब्ध नहीं होता। उनका सिद्धान्त प्रचलित है इस में सन्देह नहीं। वैशेषिक और न्याय दोनों आगे चलकर गंगा, यमुना के समान मिलगए और न्याय नाम से प्रसिद्ध हुए। आगे न्याय भी इसका यथार्थ नाम नहीं रहा। इस शास्त्र को तर्क नाम से पुकारने लगे। इसकी अपने ढंगपर बड़ी तरक्की हुई परन्तु कणाद वा गौतम की पद्धति नहीं रही। वेदान्त का स्वरूप सर्वथा बदल गया। जिस वेदान्त का व्यास प्रचार करते थे वह अब नहीं रहा। यह मायावाद बनकर जगत् के मोह के लिये होगया। व्यास ने जिस ब्रह्मोपादान कारण की स्थिरता के लिये उतना उद्योग किया था, वह ब्रह्म भी उपादान कारण न रहा। बीच में माया आगई। अजातवाद की शखध्वनि होगई, जो पिता पुत्र का सम्बन्ध

ब्रह्म और जगत् में स्थापित किया गया था स्वप्न होगया, भ्रम ठहरायागया। न यह सृष्टि कभी बनी और न बनेगी फिर पिता पुत्र का सम्बन्ध ही क्या ? जब सृष्टि हुई ही नहीं तो सम्बन्ध का अन्वेषण कैसा ? इस प्रकार वेदान्त की महती अधोगति हो रही है। मीमांसा की भी अपने समय में कुछ तरक्की हुई परन्तु वह बढ़ने न पाई। मीमांसा प्रतिपादित कर्म काण्डों से जनता घृणा करती ही रहगई क्योंकि ये कर्म प्रायः हिंसा से रहित नहीं हैं। यज्ञों में पशु हिंसा की इन्हों ने रक्षा की। जैमिनि कुमारिलभट्ट और शबर आदि अनुयायी जितने हुए वे इस यज्ञ को सप्रमाण पुष्ट करतेगए। शंकराचार्य जैसे विद्वान गण भी इसी पक्ष में रहे। पर इस के विरुद्ध मोटी २ लाठी लेके बौद्ध और जैन खड़े थे। पीछे वैष्णव-सम्प्रदाय भी इस प्रसंग में बौद्ध का ही अनुगामी हुआ। यद्यपि शंकराचार्य हिंसा को वैदिकी और कर्त्तव्य कहकर मुंह छिपा लेतेथे। तथापि इन्हों ने ऐसी युक्ति निकाली जिस से मीमांसा के कर्म-काण्ड का अभ्युदय न होने पाया।

शंकराचार्य ने कहा कि कर्म एक तुच्छ चीज़ है। अज्ञानियों के लिये उपदिष्ट है। ब्रह्मज्ञान की ही श्रेष्ठता है। कर्म से कदापि मुक्ति नहीं होगी। कर्म महाबन्धन है। ज्ञान से ही मुक्ति होती है। ब्रह्म और हम जीवों में कोई भेद नहीं. अहं ब्रह्मास्मि का बोध होने से ही कृतकृत्यता होती है। सामवेदी छान्दोग्योपनिषद् में इस के बहुत उदाहरण हैं तत्त्वमसि श्वेतकेतो यह नववार कहा गया। इत्यादि बर

ने मनुष्यों के चित्त को आकर्षित करलिया। इस कारण भी मीमांसा की तरक्की न हुई। इस के सिवाय भक्ति मार्ग का ऐसा प्रवाह बहनेलगा कि जिस में छवों शास्त्र डूबगए, मीमांसा को यहां कौन पूछता। वेदान्त भी एक कोने में छिपगया। मनुष्य इस भक्ति से भी प्रसन्न न रहे। इस समय सब ही सम्प्रदायें खिचरी होके भयंकर रूप धारण कियेहुए हैं। भारत वर्ष में इस समय काल रात्रि का समय है। हां, पाश्चिम से कुछ प्रकाश आरहा है। देखें क्या परिवर्तन लाता है। अब मैं यहां संक्षेप से षट्दर्शनों का निरूपण करता हूं।

षट्शास्त्र।

वैशेषिक शास्त्र—छवों शास्त्रों में वैशेषिक शास्त्र की अधिक प्रतिष्ठा है। आप को आश्चर्य होगा कि यह किस अलौकिक वस्तु को दिखलाता है जिससे इसका इतना गौरव है। यह शास्त्र प्रधानता से पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, इन पांच भूतों का तथा समय, दिशा, शरीर, इन्द्रिय, मन, जीवात्मा का वर्णन कर रहा है। आप प्रतिदिन इन पृथिवी आदि पांच महाभूतों को क्या आंखों से नहीं देखते? क्या इन से यथाशक्ति यथा बोध काम नहीं ले रहे हैं? पृथिवी से सहस्रों पदार्थ आप उत्पन्न करते हैं। स्वच्छजल पीते हैं। अग्नि से आप कितने स्वादिष्ठ भोजन तैयार करते हैं। मन्द, शीतल, सुगन्ध, वायु को आप बहुत पसन्द करते हैं। आकाश चारों ओर घेरे हुए है। इसके अतिरिक्त आप देखते हैं कि प्रातः काल कैसा रमणीय होता है।

सायंकाल कैसी दैवी घटना दिखला कर परमात्मा ... दि
ओर मनुष्य को ले जाता है ! अब दिन नहीं रहा ।
रात्रि आगई । पशुपक्षी चुप साध गए । उलूक और चम
दौड़ने लगे । इस प्रकार प्रतिदिन वही दिन वही रात्रि च
घूमते रहते हैं । पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, दिशाओं
आपको नहीं लगता । शरीर में मन कैसा एक अद्भुत
जीवात्मा बिना यह देह किस काम का । अब आप परीक्षा
समीक्षा कर सकते हैं कि जिसकी इतनी महती प्रतिष्ठा
भी इनही वस्तुओं के वर्णन में अपना समय बिता रहा है

वैशेषिक कर्त्ता कणाद कहते हैं कि—

धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्य
समवायानां पदार्थानां साधर्म्यवैधर्म्याभ्यां
ज्ञानान्निःश्रेयसम्" । १ । ४ ।

छः पदार्थ हैं द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष
समवाय । इनके ही जानने से मनुष्य मुक्तिलाभ करता

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालोदिग
मन इति द्रव्याणि । १ । ५ ।

१—द्रव्य के नौ भेद हैं-पृथिवी, जल, तेज, वायु,
श, काल, दिशा, आत्मा, और मन ।

रूपरसगंधस्पर्शाः, संख्याः, परिमा
पृथक्त्वं, संयोगविभागौ, परत्वापरत्वे, ब
सुखदुःखे, इच्छा द्वेषौ, प्रयत्नाश्च गुणाः ७